कैनेडा से प्रकाशित साहित्यिक पत्रिका

वसुधा

Year 14, Issue 53
Jan.-March, 2017

VASUDHA A CANADIAN PUBLICATION

EDITOR-PUBLISHER : SNEH THAKORE - Awarded By The President Of India
Limka Book Record Holder

संपादन व प्रकाशन
स्नेह ठाकुर
भारत के राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत
लिम्का बुक रिकॉर्ड होल्डर

वर्ष १४ - अंक ५३, जनवरी-मार्च २०१७

विश्वंभरा

पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह शशि

विश्वंभरा,
हरीतिमा के हिंडोले में झुलाती
आदिमानव को,
जनमती जल-प्रपातों को,
गंगा, टेम्स, डेन्यूब, नील और अमेजन को
जननी विश्व के हिमनद-नदियों की
ममतामयी माँ महासागरों की
हिमालय-यूराल से पहाड़ों को ढोती
ज्वालामुखियों की आग में दहती
मानव-जीवन की संजीवनी
प्रणाम स्वीकारो माँ,
मोहनजोदड़ों, अस्तेक, बेबीलोनिया
स्वायंभुव से वैवस्वत तक के कितने
युगाब्द लेते हैं तेरी गोद में
और मैं भी समा जाऊँगा
पंच-तत्त्वों में एक दिन
चिरनिद्रा के अंक से लिपट
और फिर एक कलम उगेगी
मेरे अस्थि-कलश से
जो फिर से लिखेगी
अग्निगीत
शोषण और अन्याय के विरुद्ध
और गुनगुनाएगी प्यार का संगीत
वसुधैव कुटुंबकम् की वीणा में
विश्व-शांति के लिए.

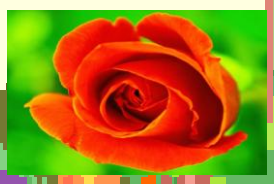

वसुधा

संपादन व प्रकाशन : स्नेह ठाकुर

(भारत के राष्ट्रपति द्वारा "हिन्दी सेवी सम्मान" से सम्मानित)

शीर्षक	रचयिता	पृष्ठ
संपादकीय		२
नव वर्ष की शुभकामना	पुष्पा जोशी	३
अपने रक्त से लिख दी थी जिन्होंने परिभाषा देशभक्ति की	नरेश भारतीय	४
मेरा देश	स्नेह ठाकुर	७
मकर संक्रान्ति - सम्यक क्रान्ति का मंथन पर्व	अरुण तिवारी	१०
बापू के प्रति	सुमित्रानंदन पंत	१३
भारतीय महाकाव्य और पुरुष विरह	वंदना कुमारी पाण्डेय	१५
ख़ूबसूरत जहान	डॉ. शशि मोहन ऋषि	१८
अंतिम तीन दिन	दिव्या माथुर	१९
कुछ भूत हो रहा है	वृषभ प्रसाद जैन	३२
ये संकल्प करें तो चमत्कार हो जाए	डॉ. वेदप्रताप वैदिक	३४
स्वर्गीय पिता ज़रूर पूछते	डॉ. हरजेन्द्र चौधरी	३६
जन्तर का मन्तर	अमित राजपूत	३७
विश्वंभरा	पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह शशि	१अ
स्नेह ठाकुर का रचना संसार		४४अ

रचनाओं में निहित विचार तथा मन्तव्य रचनाकारों के निजी विचार तथा मन्तव्य हैं। 'वसुधा' रचनाकारों के विचारों के लिए उत्तरदायी नहीं है। प्रकाशक की आज्ञा बिना कोई रचना किसी प्रकार उद्धृत नहीं की जानी चाहिए। प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा।

रचनाएँ भेजने के लिए सम्पर्क पता :

16 Revlis Crescent, Toronto, Ontario M1V-1E9, Canada. TEL. 416-291-9534

वार्षिक शुल्क Annual subscription.....$25.00

डाक द्वारा By Mail, Canada & USA.....$35.00, Other Countries.....$40.00

Website: http://www.Vasudha1.webs.com

e-mail: sneh.thakore@rogers.com

संपादकीय

दीया माटी का हो या सोने का प्रकाश तो एक जैसा ही सबको देता है, छोटे-बड़े का भेदभाव नहीं करता है. व्यक्ति धनवान हो या निर्धन, हृदय की पवित्रता ही उसकी सबसे मूल्यवान सम्पदा है. आइये, हम भी चाहे किसी भी वर्ग के हों, स्वयं के हृदय को निष्पाप दीया बना बिना किसी भेदभाव के अपना आस-पास प्रकाशित करें जो न केवल दूसरों का वरन् स्वयं का भी मार्ग प्रशस्त करेगा. घृणा करने के लिए स्वयं में भी घृणा का वास आवश्यक है पर प्रकाशित हृदय में घृणा का वास क्या उसका आविर्भाव भी असंभव है. क्रोध के लिए उसके द्वार बंद हैं. जहाँ घृणा, द्वेष, क्रोध की कलुषता नहीं वहाँ सबके प्रति पावन-पुनीत प्रेम की उर्ध्व शिखा की ज्योत्स्ना का साम्राज्य ही होगा, कालिमा का नहीं. आइये, नव वर्ष में इस ज्योत्स्ना को बनाये रखने का संकल्प लें. प्राणों में प्रेम की ऊर्जा भर स्वयं का व दूसरों का जीवन सुखमय बनाने में प्रयासरत हों.

होली की सभी को शुभकामनाएँ. होली जहाँ ईश्वर की सत्ता स्वीकार करने का त्योहार है कि हर विषम से विषम परिस्थिति में ईश्वर अपने भक्त की रक्षा करता है, विकट से विकट अवस्था में उसे सुरक्षित रखता है, होलिका-दहन व हिरण्यकशिपु-वध से बुराई का अंत कर, भगवान में परम आस्था रखने वाले अपने भक्त प्रह्लाद का मन सत् चित् आनंद से भर देता है, वहीं यह त्योहार अगली-पिछली वैमनस्यता भुला कर मित्रता का हाथ थामे स्वयं की व दूसरे की कालिमा, कलुषता मिटाकर सौहार्द्रपूर्ण भाव से एक-दूसरे पर सच्चिदानंद के शुभ रंगों की वर्षा करने की शिक्षा भी देता है. जब आप कलुषता की कालिमा को त्याग भाईचारे के पावन-पुनीत शुभ रंगों से दूसरे को प्लावित करते हैं तो उसके छींटे स्वयं पर भी पड़ते हैं. अत: ऐसे छिड़काव न केवल दूसरों के जीवन में वरन् स्वयं के जीवन में भी खुशियों की बहार लाते हैं. आइए इस भावाव्यक्ति के साथ हम होली का संकल्प लें और मानवता को आदर्श-प्रेम के रंग में रंग कर, सराबोर कर भारतीय होली का उत्कृष्ट शुभ संदेश विश्व में स्थापित करें.

'वसुधा' वर्ष-दर-वर्ष गुणवत्ता व सार्थकता के सोपान पर अग्रसर अपनी सफलता के लिए अपने लेखकों, पाठकों व शुभचिंतकों की आभारी है. 'वसुधा' के हित से संबद्ध सभी प्रत्यक्ष-परोक्ष सहयोग हेतु धन्यवाद.

यह गर्व का विषय है कि वसुधा के लेखक, डॉ. विनय कुमार शर्मा, प्रधान संपादक "शोध संचार बुलेटिन" जिसके परामर्श-मण्डल में मैं हूँ, को राष्ट्रपति माननीय प्रणब मुखर्जी द्वारा 'राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान' प्रदान किया गया है, ठाकुर साहब व मेरी ओर से बहुत-बहुत बधाई.

मेरे उपन्यास "श्रीरामप्रिया सीता" के प्रकाशन और उसके प्रति सभी हितैषियों की भाव-भीनी शुभकामनाओं हेतु हार्दिक आभार. आप सबकी प्रेरणादायक मंगलकामनाओं को अपनी अमूल्य निधि-स्वरूप आँचल में सहेज लिया है. कृतज्ञ हूँ. आशा है कि मेरा नया उपन्यास "श्रीरामप्रिया सीता" सभी हितैषियों की शुभकामनाओं से मेरे पहले के दो उपन्यासों - "कैकेयी चेतना-शिखा" एवं "लोक-नायक राम" जिनके एक साल में द्वितीय संस्करण प्रकाशित हुए हैं - की भाँति यह भी पाठकों का स्नेह-भाजन बनेगा.

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर जी की पंक्तियों से अंत करना चाहूँगी - "सेनानी करो प्रयाण, सारा आकाश तुम्हारा है।"

नव वर्ष विश्व-शांति का अग्रदूत बन कर आए, इस मंगलकामना की प्रत्याशी बन,

सस्नेह, स्नेह ठाकुर

नव वर्ष की शुभकामना

पुष्पा जोशी

नववर्ष की भारतवर्ष तुम्हें, शुभकामना प्रेषित करते हैं
भारत तेरी खुशहाली को तन-मन-धन अर्पित करते हैं.

धनधान्य भरे भंडार तेरे, निर्मल जल पावन नदियाँ हों
सौभाग्य जगे भारतवासी, स्वर्णिम भारत फिर निर्मित हो.

सुख-शांति रहे नव क्रांति रहे और दूर सभी की भ्रान्ति रहे
तन पुलकित हों, मन हर्षित हों, नवभारत मृदु मुस्कान भरे.

भय, हिंसा, घृणा और द्वेष न हो, अब दुःख कोई भी शेष न हो
पशु-पक्षी, धरा और मानव सब, चहकें-महकें मृदुगान करें.

हर देश तुम्हारा मित्र बने, दुश्मन का नामोनिशां न रहे
हम हों प्रकृति के आभारी, सर्वस्व देश पर हो वारी
सोने की चिड़िया, जगद्गुरु, भारत को फिर से नाम मिले.

नववर्ष की भारतवर्ष तुम्हें, शुभकामना प्रेषित करते हैं
भारत तेरी खुशहाली को तन-मन-धन अर्पित करते हैं.

अपने रक्त से लिख दी थी जिन्होंने परिभाषा देशभक्ति की

(भगत सिंह जी लेखक की पत्नी वीरेंद्र जी के ताया जी हैं - संपादक)

नरेश भारतीय

आज गर्व और श्रद्धा के साथ भारत माता के उन तीन वीरों भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव के स्मरण का दिन है, जिन्होंने देश की आज़ादी के लिए हँसते हँसते अपने प्राणों की आहुति दे दी थी. ८६ वर्ष पूर्व २३ मार्च १९३१ की संध्या की कल्पना करें जब लाहौर की जेल में अचानक भारत माता की जय और वन्दे मातरम के नारे गूँजने लगे थे. फाँसी देने के लिए निर्धारित तिथि २४ मार्च से एक दिन पहले ही उन्हें फाँसी दे दी गई थी. ब्रिटिश हुक्मरानों के दिल में यह भय समा गया था कि दिन के उजाले में उन्हें फाँसी देने से देश में उनके शासन के विरुद्ध भारी जनरोष उमड़ सकता है. अँग्रेजों के विरुद्ध क्रांतिकारियों के द्वारा उठाए गए हर कदम से देश भर में जिस तरह से उत्साह और बलिदान की भावना को बल मिलता था उसके दृष्टिगत उनकी यह सोच सही ही थी. उनका क्रांति मार्ग सुलह समझौतों की राजनीति की अपेक्षा जनता में कहीं अधिक जोश भर देने वाला सिद्ध हो रहा था. अपने आप में यह क्रांतिकारियों की ताकत का सबूत भी था. उनकी प्रखर देशभक्ति और भारतमाता के चरणों में अपने शीश न्यौछावर कर देने की उनकी तत्परता का प्रत्यक्ष प्रकटीकरण. तब देश के युवाओं के लिए एक संदेश जाता था कि 'अपना सर उठा कर चलो, सर झुका कर नहीं'. आज भी उस हर किसी की ज़ुबान पर 'इन्कलाब जिंदाबाद', भारत माता की जय और वन्देमातरम के नारे बरबस आ जाते हैं जब कहीं होते अन्याय, शोषण और देशद्रोही कृत्य के विरुद्ध जन आह्वान करने की आवश्यकता पड़ती है.

२३ वर्ष के आसपास थी इन तीनों महाबलिदानी वीरों की उम्र जब उन्होंने अपने यौवन को देश की स्वतंत्रता की बलिवेदी पर न्यौछावर करके विश्व के लिए अनुपम उदाहरण कायम कर दिया था. देश की कोटि कोटि जनता उनके अमरत्व को पल-पल सलाम करती है. अपनी संतानों को उनके बलिदान की यशगाथा सुना कर प्रेरित करती आई है. रोंगटे खड़े होते हैं और खून उबलता है जब २३ मार्च की रात के उस भयानक अँधेरे को चीरता यह सत्य उजागर होता है कि तीनों शहीदों के शरीर के टुकड़े करके एक ट्रक से उनके शव लाहौर से फिरोजपुर लाए गए थे. सतलुज नदी के किनारे अग्नि की भेंट कर दिए गए. शहर के लोगों तक खबर पहुँचते ही कुछ लोग भागे गए और उस धरती की मिट्टी लेकर अपने मस्तक पर लगाने लगे. परिवार के लोग भी पहुँच गए जिन्हें फाँसी के बाद शव सौंपे नहीं गए थे. भारत पाकिस्तान की सीमा के पास स्थित इस पवित्र स्थान पर उनका स्मारक बना है.

भगत सिंह के बलिदान के बाद देश की युवा शक्ति और अधिक साहस के साथ उठ खड़ी हुई. आज़ादी के लिए जारी संघर्ष को और बल मिला. अहिंसा मार्ग के अनुगामी और इस कारण भगतसिंह के क्रांतिमार्ग के आलोचक रहे गाँधी ने इरविन के साथ अपनी समझौता वार्ता में भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव को दी जाने वाली फाँसी को रद्द करवाने की कोशिश नहीं की थी. इसी कारण गाँधी के प्रति जनरोष उमड़ा था. उनके विरुद्ध स्थान-स्थान पर काले झंडे दिखाने की चर्चा हाल में उजागर हुए तथ्यों में मिलती है. क्रांतिकारियों के संगठन को कुछ ऐसे देशद्रोहियों ने बर्बाद कर दिया था जो अँग्रेजों के वादामाफ गवाह बन गए थे और उन्होंने उनके सब ठिकानों के रहस्य बता दिए थे. 'हिन्दुस्थान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी' के नाम से अँग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष को कारगर बनाने वाले बहादुर कमांडर-इन-चीफ चन्द्रशेखर आज़ाद के भी, किसी के धोखा देने से, शहीद हो जाने के बाद युद्ध का यह मोर्चा बंद हो गया. यह है देशद्रोह का एक और प्रकरण. हमारा इतिहास, दुर्भाग्यवश, ऐसे अनेक उदाहरणों से भरा पड़ा है जब एक तरफ देश को विदेशी दासता से बचाने के लिए अद्भुत शौर्यपूर्ण युद्ध

लड़े गए हैं और दूसरी तरफ देशद्रोहियों ने देशभक्तों के बलिदानों को लांछित करके माँ भारती का अपमान किया है.

इसी परिप्रेक्ष्य में, मुझे यह देख कर दुःख होता है कि लम्बे संघर्ष के बाद मिली आज़ादी के ६९ वर्षों के बाद आज भारत अबोध बच्चों की तरह देशभक्ति और देशद्रोहिता की परिभाषा को खोजता भटकता दिखाई देने लगा है. जब कोई कन्हैया 'आज़ादी' का नारा देकर देश के टुकड़े टुकड़े कर देने के नारे लगाने वालों के साथ जा खड़ा है. ऐसी भाषा बोलता है जिसमें देशद्रोह की गंध आती है. संविधान के प्रति निष्ठा की दुहाई देता है लेकिन अपने व्यवहार से भारत विरोध को 'आवाज़' देता है. वामपंथी मीडिया उसे शह देता है. देश में जनमत को बाँटने का क्रम शुरू हो जाता है. अभिव्यक्ति की पूरी आज़ादी के होते हुए भी बार बार इस हक को जतलाया जाता है. किसी के द्वारा कुछ भी कहने की छूट का दावा किया जाने लगता है. जिस तरह की बहस सुनी देखी है विश्वास नहीं होता कि हजारों वर्षों की दासता की यातनाएँ भुगतने के बाद भी देश में ऐसे लोग हैं जो देश के टुकड़े टुकड़े करने वालों की सोच को समर्थन दे सकते हैं. ये लोग इन्कलाब जिंदाबाद के नारों के साथ शहीदेआजम भगत सिंह को अपने साथ जोड़ लेते हैं. उन्हें भारत की धरती पर पनपे राष्ट्रवाद से चिढ है लेकिन विदेशी भूमि पर पनपे मार्क्सवाद पर गर्व है जो समय के तेज़ बहाव में डूब चुका है. अपने देशधर्म को पूर्ण समर्पण भाव के साथ निभाने वाले भगतसिंह भारत के जन-जन के ह्रदय में यूँ समाए हैं कि वे किसी एक वर्ग, धर्म, सम्प्रदाय और विचारधारा के बंधन में नहीं बँध सकते. देश के वीर शहीदों को बाँट कर देखने वाला समाज देश की एकता और अखंडता की रक्षा करने में समर्थ नहीं हो सकता. जरा सोचें क्या भगत सिंह जो देश की आज़ादी के लिए कुर्बान हो गए आज उसी देश के फिर से टुकड़े टुकड़े कर देने का संकल्प लेने वालों का साथ देते? जेएनयू के इन छात्रों के द्वारा भगतसिंह को अपने कवच के रूप में इस्तेमाल करना उनके प्रति सम्मान को प्रदर्शित करता है?

देश में विरोध पक्ष के द्वारा इस समय राजनीति का जो बचकाना खेल खेला जा रहा है उसका दिलचस्प नमूना तब देखने को मिला जब कम्युनिस्ट, काँग्रेसी और आआपा इन सरफिरे छात्रों का साथ देने के लिए उनके साथ जा खड़े हुए. सत्तापक्ष भाजपा के द्वारा यह सवाल उठाए जाने के बाद कि इन छात्रों ने तो देश को तोड़ देने तक के नारे लगाए हैं विरोधी पक्ष को कोई उत्तर सूझा नहीं. लेकिन जब हाल ही में काँग्रेस के एक सुलझे समझे नेता माने जाने वाले शशि थरूर ने भी अपनी एक टिप्पणी में कन्हैया को भगतसिंह के बराबर ला खड़ा किया तो मन की पीड़ा और गहरी हो गई. क्या राजनीति में देशभक्ति के स्थान पर वोटभक्ति हावी हो गई है? आज़ादी के पश्चात जिस तरह के राजनीतिक वातावरण का निर्माण देश में होता आया है उसमें सचमुच देशभक्ति की परिभाषा को स्पष्ट करना अब समय की आवश्यकता बन चुकी है. अरसे से स्वार्थपूर्ति का साधन बनी राजनीति जनता के शोषण का साधन बनी रही है. दर्जनों घपले घोटाले, रिश्वत काण्ड, जमाखोरी और कालेधन के किस्सों से भरा इसका आज़ादी के बाद का रचा गया इतिहास है. निस्संदेह, इसे बदले जाने की आवश्यकता है. वर्तमान सरकार राष्ट्रवादी भाजपा की सरकार है अब तक जमा किए गए कूड़े कीचड़ को साफ़ करने का वादा जनता से करके पूर्ण बहुमत के साथ सत्ता में आई है. उसका काम विरोध पक्ष के द्वारा खड़ी की गई अड़चनों के कारण रुकता है. छिछली राजनीति की धूल संसद में उड़ने लगती है. कहीं कोई 'भारत माता की जय' कहने से इन्कार करता है क्योंकि किसी राष्ट्रवादी संस्था ने इसका आग्रह किया है. कहीं किसी से यह दुहाई दी जाने लगती है कि भारतमाता की जय इसलिए भी नहीं बोली जा सकती क्योंकि उनका मज़हब इसकी अनुमति नहीं देता. उनके लिए मज़हब देश से ऊपर है.

जहाँ तक देशभक्ति की खोजी जा रही परिभाषा का प्रश्न है अंतरात्मा में झाँकें. उत्तर विद्यमान है. आज़ादी से पूर्व के भारतीयों में देश को विदेशी दासता से मुक्त कराने की धुन सवार थी. उनमें देशभक्ति का ज्वार उस युग की ऐसी परिस्थितियों से उत्पन्न हुआ था जो विदेशी साम्राज्यवाद की देन

थीं. विदेशी शासकों ने हर तरह से हमारा शोषण किया. कोई भी कौम इस तरह के शोषण और दासता को हमेशा के लिए स्वीकार नहीं करती. इसलिए विश्व भर में जहाँ कहीं साम्राज्यवादी शक्तियाँ हावी थीं उनके विरुद्ध संघर्ष हुआ. सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्रांतियों को जन्म मिला. बचपन से ही खोजी प्रवृति के भगत सिंह ने फ़्रांस और रूस की क्रांतियों का अध्ययन किया. मार्क्सवाद को भी समझा. अपने देश में साम्राज्यवादी अंग्रेजों को मात देने के लिए उन्होंने अपने इस अध्ययन का समुचित उपयोग जवाबी तर्कों के रूप में किया. उनका सर्वप्रथम लक्ष्य था विदेशियों से भारत को मुक्त करना और उसके बाद किसी भी प्रकार के शोषण से मुक्त समाज की रचना. उनका एक स्वप्न २३ मार्च १९३१ को उनके बलिदान के बाद के मात्र १६ वर्ष बाद १९४७ में पूरा तो हुआ लेकिन दुर्भाग्यवश भारत के टुकड़े होने के बाद. गाँधी और उनकी काँग्रेस ने मज़हबी आधार पर देश के बँटवारे को स्वीकार करके ऐसी ऐतिहासिक भूल कर दी जिसका दुष्फल आज भी भारतीय भूखंड भुगत रहा है. भगत सिंह होते तो देश के टुकड़े न होने देते क्योंकि भारतमाता की खंडित प्रतिमा को वे कदापि स्वीकार न करते.

भगतसिंह नास्तिक थे क्योंकि उन्होंने स्वयं इसकी मीमांसा की है इस बात को वामपंथियों के द्वारा बढ़-चढ़ कर प्रचारित किया जाता है. मेरी मान्यता यह है कि वे तो भारतमाता की अखंड प्रतिमा के अनन्य उपासक थे. उन्हें इसके सिवा और किसी देवी-देवता और भगवान की पूजा अर्चना करने की आवश्यकता ही महसूस नहीं हुई. उनका एक ही लक्ष्य था भारत की विदेशी दासता से मुक्ति और एक ऐसे समाज की रचना जिसमें किसी के द्वारा किसी के भी शोषण के लिए कोई स्थान न हो. इसे समाजवादी व्यवस्था कहा जाए अथवा साम्यवादी, उनकी इस सोच को मार्क्सवादी कह कर आयातित विदेशी विचारधारा को बल प्रदान करें, लेकिन भगतसिंह की देशभक्ति अक्षुण्ण है. उनके साहसी एवं स्वार्थ से सर्वदा मुक्त बलिदान की भावना का सम्मान करते हुए उन्हें खेमों में बाँध कर रखने की प्रवृति को रोके जाने की आवश्यकता है. वे हर तरह से राष्ट्रवादी थे क्योंकि उनकी विचारदृष्टि सर्वदा राष्ट्रहितपरक थी. मैं उन्हें किसी और दृष्टि से देखने की सोच का समर्थन नहीं करता. आज उनके बलिदान दिवस पर यही अपेक्षा भारत के करोड़ों देशभक्तों से भी करता हूँ कि जन जन के हृदय में बसे इन महा बलिदानी वीरों की छवि को धूमिल न होने दें.

जिन्होंने लिख दी थी अपने खून से देशभक्ति की परिभाषा, कौन है अनजान जो यह पूछे कि देशभक्ति क्या है.

मेरा देश

स्नेह ठाकुर

मेरा देश आज
दो नामों में बँट गया है
भारत और इंडिया
भारत पूर्वीय दैवीय गुणाच्छादित सभ्यता का प्रतीक
और इंडिया पाश्चात्य सभ्यता का.
भारत इंडिया के भार से
दबा जा रहा है
अधोपतन के गर्त में
डुबाया जा रहा है.
भारत की सात्विक संस्कृति की छाती पर
इंडिया की तामसिक वृत्ति
चढ़कर बैठ गई है
और उसे सौतेले भाई की भाँति
चौखट से बाहर
निष्कासित कर रही है.
एक ओर जहाँ इंडिया
दिन दूना रात चौगुना
उन्नति के शिखर पर
पहुँच रहा है,
वहीं भारत
सहमा-सा, ठिठका-सा
दम तोड़ता हुआ
घुटनों पे खड़ा रह गया है.
जिस भारत में दूध की नदियाँ बहती थीं
वहाँ के नागरिक को आज कहीं-कहीं
स्वच्छ पानी भी दुर्लभ है
इंडिया का निवासी
पेप्सी, कोक, बियर की बहुलता से
सराबोर है.

भारत आज भी
पगडंडी पर
बैलगाड़ियों में भ्रमण करता है
इंडिया में कारों की कमी नहीं
एक्सप्रेस हाइवे पर
फर्राटे से
मार्ग में आने वाले
किसी भी अनचाहे व्यवधान को
कुचलती चलती है.

इंडिया का निवासी
अँग्रेजी, जर्मन, फ्रेंच पढ़ता है
भारत का
रोजी-रोटी के चक्कर में
पेट की आग का ईधन जुटाने
तन ढाँकने
मज़दूरी-मशक्कत करने में
व्यस्त रहता है
क ख ग की शिक्षा से भी
दूर छिटक जाता है.

इंडिया की महिलाएँ
चुस्त-दुरुस्त फैशन में
शिखरोन्मुख हैं
सुंदरियाँ मिस यूनीवर्स, मिस वर्ल्ड के पद पर
पदासीन हैं
पर भारत की नारी
अभी भी उत्पीड़ित है.

इंडिया में
दिखावे के चक्कर में
लाखों रूपये खर्च किए जाते हैं
पर भारत में
करोड़ों लोगों को
दो जून की रोटी भी नसीब नहीं होती है.

भारतीय साहित्य, संस्कृति दम तोड़ रही है
और पश्चिमीय सभ्यता जोरों से पनप रही है
लोकगीत, नृत्य, कला
अपने ही घर में सिर झुका
लज्जित-से कोने में खड़े हैं

और इंडिया के पाँव
पाश्चात्य धुन पर थिरक रहे हैं.
भारत दाने-दाने और पैसे-पैसे का मोहताज़ है
और इंडिया काले धन से मदहोश है
इंडिया पर्याय है ऐय्याशी का
तो भारत संघर्ष का.
इंडिया और भारत के बीच
एक गहरी खाई खुद गई है
जो दिनों-दिन अंधे कुएँ-सी
गहराती जा रही है.
भारतीय इंडियन बन
अपनी मातृभाषा को परे धकेल
पराई भाषा में,
उधार मिली संस्कृति में
सुखानुभूति अनुभव करता है
यह कैसी विडम्बना है!
एक ज़माने का इतना समृद्धशाली भारत
माँगी हुई संस्कृति के बल पर
अपने को ऊँचा दिखाने के विकृत प्रयत्न पर
दिखता है कितना दारुण, हास्यास्पद.
जो देश था हर गौरव से भरपूर
वही उन सब को तुच्छ मान
नकली हीरों की चमक से प्रभावित
गलत सिद्धांतों की बैसाखियाँ लगाकर
भौतिकता की अंधाधुंध दौड़ में शामिल
बदहवास भागता जा रहा है.
काश! भारत
स्वयं के नाम से ही जाना जाता
उसका अँग्रेजी अपभ्रंश रूपांतरण न होता
भारत भारत ही रहता इंडिया न बनता.
काश! आज भी भारत जाग जाए
अपना मूल्य पहचाने
संकट के कगार पर खड़ा भारत
अतीत के असंख्य अनमोल रत्नों की
धूल झाड़-पोंछ कर
उन्हें चमका-चमका कर
अपने बूते पर
विश्व में अपना तिरंगा फहराए.

मकर संक्रान्ति - सम्यक क्रान्ति का मंथन पर्व

अरुण तिवारी

संक्रान्ति यानी सम्यक क्रान्ति - इस नामकरण के नाते तो मकर संक्रान्ति सम्यक क्रांति का दिन है; एक तरह से सकारात्मक बदलाव के लिए संकल्पित होने का दिन। ज्योतिष व नक्षत्र विज्ञान के गणित के मुताबिक कहें, तो मकर संक्रान्ति ही वह दिन है, जब सूर्य उत्तरायण होना शुरु करता है और एक महीने, मकर राशि में रहता है; तत्पश्चात् सूर्य, अगले पाँच माह कुंभ, मीन, मेष, वृष और मिथुन राशि में रहता है। इसी कारण, मकर संक्रान्ति पर्व का एक नाम 'उत्तरायणी' भी है। दक्षिण में इसे पोंगल के रूप में मनाया जाता है। पहले दिन भोगी पोंगल, दूसरे दिन सूर्य पोंगल, तीसरे दिन मट्टू पोंगल और चौथे तथा आखिरी दिन कन्या पोंगल। मट्टू पोंगल को केनू पोंगल भी कहते हैं। भोगी पोंगल पर साफ-सफाई कर कूड़े का दहन, सूर्य पोंगल को लक्ष्मी पूजा व सूर्य को नैवैद्य अर्पण, मट्टू पोंगल को पशुधन पूजा, कन्या पोंगल को बेटी और दामाद का विशेष स्वागत-सत्कार। १३ जनवरी का दिन पंजाब-हरियाणा के कथानक पर आधारित लोहड़ी पर्व के लिए तय है ही।

सूर्य पर्व : एक दिन का हेर-फेर हो जाये, तो अलग बात है, अन्यथा मकर संक्रान्ति का यह शुभ दिन, हर वर्ष अँग्रेजी कैलेण्डर के हिसाब से १४ जनवरी को आता है। इसका कारण यह है कि मकर संक्रान्ति एक ऐसा त्योहार है, जिसकी तिथि का निर्धारण सूर्य की गति के अनुसार होता है, जबकि भारतीय पंचाग की अन्य समस्त तिथियाँ, चन्द्रमा की गति के आधार पर निर्धारित की जाती हैं। स्पष्ट है कि मकर संक्रान्ति, सूर्य पर्व है।

दिशा-दशा बदलाव सूचक पर्व : इससे पूर्व १६ जुलाई को सूर्य, कर्क राशि में प्रवेश करने के बाद करीब छह माह के दौरान सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और धनु राशि में रहता है। छह माह की यह अवस्था, सूर्य की दक्षिणायण अवस्था कहलाती है। दक्षिणायण अवस्था में सूर्य का तेज कम और चन्द्र का प्रभाव अधिक रहता है। दक्षिणायण में दिन छोटे होने लगते हैं और रातें लंबी। यह अवस्था, वनस्पतियों की उत्पत्ति में सहायक मानी गई है। उत्तरायण होते ही, सूर्य का तेज बढ़ने लगता है। दिन, लंबे होने लगते हैं और रातें, छोटी। इस तरह मकर संक्रान्ति एक तरह से सूर्य की दिशा और मौसम की दशा बदलने का सूचक पर्व भी है। शिशिर ऋतु की विदाई और बसंत के आगमन का प्रतीक पर्व!

इससे पूर्व १४ दिसंबर से १३ जनवरी तक का समय एक ऐसे महीने के तौर पर माना गया है, जिसमें शुभ कार्य न किए जायें; एक तरह से शादी-ब्याह के उत्सवों के बाद संयम की अवधि। इस अवधि को 'खरमास' भी कहा गया है।

'पौष-माघ की बादरी और कुवारा घाम, ये दोनो जो सह सके, सिद्ध करे सब काम।'

हम सभी जानते हैं कि पौष के महीने में माघ की तुलना में ज्यादा कठिन बदली होती है। श्रावण-भादों की तरह इस अवधि में भी सूर्य से पूर्ण संपर्क नहीं होता। जठराग्नि मंद पड़ जाती है। भोजन में संयम

जरूरी हो जाता है। संभवतः इसलिए भी उक्त अवधि को 'खरमास' के तौर पर शुभ कार्यों हेतु वर्जित किया गया हो। इसी तरह उत्तरायण में शरीर छूटे, तो दक्षिणायण की तुलना में उत्तम माना गया है। अब इन मान्यताओं का विज्ञान क्या है? कभी जानना चाहिए।

दान पर्व : सामान्यतया स्नान, दान, तप, श्राद्ध और तर्पण आदि मकर संक्रान्ति के महत्वपूर्ण कार्य माने गये हैं। चूड़ा, दही, उड़द, तिल, गुड़, गो आदि मकर संक्रान्ति के दिन दान के भी पदार्थ और स्वयं ग्रहण करने के भी। महाराष्ट्र में विवाहिता द्वारा अपने पश्चात् पहली संक्रान्ति पर अन्य सुहागिनों को कपास, तेल और नमक दान की प्रथा है। तिल-गुड़ बाँटना और मीठे बोल का आग्रह करने का सामान्य चलन तो है ही। स्नान करें, पर्व कर्म करें और सूर्य का आशीष लें; किंतु जयपुर, राजस्थान में आप मकर संक्रान्ति को पतंग उड़ाने की उमंग के पर्व के रूप में पाएँगे। आकाश, पतंगों और डोर के संजाल से पटा होगा और छतें, हर उम्र के लोगों से। जैसे रंग-बिरंगी छतरी बनाकर सभी सूर्य का स्वागत करने निकल आये हों। यूँ राजस्थान में मकर संक्रान्ति का दूसरा रूप सुहागिनों द्वारा सुहाग सूचक १४ वस्तुओं का पूजन तथा उनका ब्राह्मणों को दान के रूप में देख सकते हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश में इस दिन खिचड़ी का भोजन करने तथा उड़द-चावल, नमक, खटाई आदि दान करने का प्रावधान है। इस नाते, वहाँ इस पर्व को 'खिचड़ी' कहकर पुकारा जाता है। असम में मकर संक्रान्ति को 'माघ बिहू' व 'भोगाली बिहू' के नाम से जानते हैं।

संगम स्नान पर्व : "माघ मकर गति जब रवि होई। तीरथपति आवहू सब कोई।।" अर्थात माघ के महीने में जब सूर्य मकर राशि में प्रवेश करे, तो सभी लोग तीर्थों के राजा यानी तीर्थराज प्रयाग में पधारिए। प्रयाग यानी संगम। संगम सिर्फ नदियों का ही नहीं, विज्ञान और धर्म, विचार और कर्म, संन्यासी और गृहस्थ तथा धर्मसत्ता, राजसत्ता और समाजसत्ता का संगम। कभी ऐसा ही संगम पर्व रहा है, मकर संक्रान्ति। कोई न्योता देने की जरूरत नहीं; सभी को पता है कि हर वर्ष, मकर संक्रान्ति को प्रयाग किनारे जुटना है। सभी आते हैं, बिना बुलाये।

प्रयाग किनारे ही क्यों ? इस प्रश्न के उत्तर में जानकार कहते हैं कि खासकर, इलाहाबाद प्रयाग की एक विशेष भौगोलिक स्थिति है। मकर संक्रान्ति को प्रयाग, आकाशीय नक्षत्रों से निकलने वाली तरंगों का विशेष प्रभाव केन्द्र होता है। जिन-जिन तिथियों में ऐसा होता है, उन-उन तिथियों में प्रयाग में विशेष स्नान की तिथि होती है। इन तिथियों का मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से विशेष महत्व है। बहुत संभव है कि इसी तरह ऊपर उत्तराखण्ड में स्थित पंच प्रयागों की भी कोई खास स्थिति हो; कभी अध्ययन करें।

गंगासागर एक बार : जहाँ गंगा, समुद्र से संगम करती है, वह स्थान 'गंगासागर' के नाम से जाना जाता है। इसी स्थान पर कपिल मुनि द्वारा राजा सगर के ६० हजार पुत्रों के भस्म करने की कथा है। राजा भगीरथ के तप से धरा पर आई माँ गंगा द्वारा इसी स्थान पर सगर पुत्रों के उद्धार का कथानक है। संभवतः इसीलिए मकर संक्रान्ति के अवसर पर गंगासागर में जैसा स्नान पर्व होता है, कहीं नहीं होता। क्या उत्तर, क्या दक्षिण और क्या पूर्व, क्या पश्चिम...पूरे भारतवर्ष से लोग गंगासागर पहुँचते हैं कहते हुए - 'सारे तीरथ बार-बार, गंगासागर एक बार।' कपिल मुनि का आश्रम, आज भी गंगासागर के तीर्थ

यात्रियों के लिए विशेष आकर्षण का पूज्य स्थान है। आखिरकार, कपिल मुनि का दिया शाप न होता, तो भगीरथ प्रयास क्यों होता और गंगा, गंगासागर तक क्यों आतीं?

पिछले वर्ष २३ अप्रैल से सिंहस्थ कुंभ था। इससे पहले हरिद्वार का अर्धकुंभ शुरु हो चुका था। अर्धकुंभ २२अप्रैल तक चला। इलाहाबाद में प्रयाग का माघ मेला वार्षिक आयोजन भी था। १४४वर्ष बाद आता है, महाकुंभ। वर्ष २०२५ में इलाहाबाद का प्रयाग, महाकुंभ का स्थान बनेगा। सभी स्नान, दान और ध्यान के अद्भुत मौके होंगे।

मंथन पर्व : गौर कीजिए कि आज हम मकर संक्रान्ति को माघ मेले और अर्धकुंभ के प्रथम स्नान पर्व के रूप में ज्यादा भले ही जानते हों, किंतु वास्तव में मकर संक्रान्ति, एक मंथन पर्व है; सम्यक क्रान्ति हेतु चिंतन-मनन का पर्व। माघ मेले के दौरान समाज, राज और प्रकृति को लेकर किए अनुसंधानों का प्रदर्शन, उन पर मंथन, नीति निर्माण, रायशुमारी, समस्याओं के समाधान और अगले वर्ष के लिए मार्गदर्शी निर्देश - इन सभी महत्वपूर्ण कार्यों की विमर्श शालाओं का संगम जैसा हो जाता था कभी अपना पौराणिक प्रयाग। ऋषियों के किए अनुसंधानों पर राज और धर्मगुरु चिंतन कर निर्णय करते थे। नदी-प्रकृति के साथ व्यवहार हेतु तय पूर्व नीति का आकलन और तद्नुसार नव नीति का निर्धारण का मौका भी थे, माघ मेले और कुंभ। जो कुछ तय होता था धर्मगुरु, अपने गृहस्थ शिष्यों के जरिए उन अनुसंधानों/नीतियों/प्रावधानों को समाज तक पहुँचाते थे। माघ मेला और कुंभ में कल्पवास का प्रावधान है ही इसलिए।

कितना महत्वपूर्ण कल्पवास ?

पौष माह के ११ वें दिन से शुरु होकर माघ माह के १२वें दिन तक कल्पवास करने का प्रावधान है। कल्पवासी प्रयाग में आज भी इस अवधि के दौरान जुटते हैं। आमतौर पर कल्पवासी उम्रदराज होते हैं; एक तरह से परिवार के ऐसे मुखिया, जो अब मार्गदर्शी भूमिका में हैं। ये परिवार प्रमुख, कल्पवास के दौरान अपने परिवार से पीढ़ी-दर-पीढ़ी संबद्ध गुरु परिवार से मिलते हैं। उनके मिलने के स्थान तय होते हैं। इन स्थानों पर गुरु सानिध्य में कल्पवासी, बेहतर गृहस्थ जीवन का ज्ञान प्राप्त करते थे; यही पंरपरा है। एक कालखण्ड ऐसा भी आया कि जब माघ मेला और कुंभ, कारीगरों की कला-प्रदर्शनी के भी माध्यम बन गये।

यूँ बदला स्वरूप : १९६० के दशक में साधु अखाड़ों में धन का प्रभाव और धन जुटाने में समर्थ धर्म प्रवचन करने वालों का वर्चस्व बढ़ा। इस वर्चस्व के अखाड़ों से निकलकर समाज के बीच छा जाने की मंशा ने हमारे माघ मेले और कुंभ मंथन मेलों का स्वरूप बदल कर रख दिया। दुर्भाग्यपूर्ण है कि आज हमारे स्नान पर्व, धर्मसत्ता के दिखावट और सजावट के पर्व बनकर रह गये हैं।

कैसे फिर बने सम्यक क्रान्ति का मंथन पर्व ? आइये, मकर संक्रान्ति को फिर से सम्यक क्रान्ति मंथन पर्व बनायें; जिन नदियों के किनारे जुटते हैं, उनकी ही नहीं, राज-समाज और संतों की अविरलता-निर्मलता सुनिश्चित करने का पर्व यह कैसे हो ? राज, समाज और प्रकृति का प्रतिनिधित्व करने वाले ऋषियों के बीच राष्ट्र और प्रकृति के प्रति जन-जन के कर्म संवाद की अविरलता और निर्मलता सुनिश्चित किए बगैर यह संभव नहीं। आइये, यह सुनिश्चित करें। इसी से भारत, पुनः भारतीय हो सकेगा; मौलिक भारत।

बापू के प्रति

सुमित्रानंदन पंत

तुम मांसहीन, तुम रक्तहीन, हे अस्थिशेष! तुम अस्थिहीन,
तुम शुद्ध-बुद्ध आत्मा केवल, हे चिर पुराण, हे चिर नवीन!
तुम पूर्ण इकाई जीवन की, जिसमें असार भव-शून्य लीन;
आधार अमर, होगी जिस पर भावी की संस्कृति समासीन!

तुम माँस, तुम्ही हो रक्त अस्थि, - निर्मित जिनसे नवयुग का तन,
तुम धन्य! तुम्हारा निःस्व त्याग हो विश्व-भोग का वर साधन।
इस भस्म काम तन की रज से जग पूर्णकाम नव जग जीवन
बीनेगा सत्य अहिंसा के ताने-बानों से मानवपन!

सदियों का दैन्य तमिस्र तूम, धुन तुमने कात प्रकाश सूत,
हे नग्न! नग्न पशुता ढँक दी बुन नव संस्कृत मनुजत्व पूत!
जग पीड़ित छूतों से प्रभूत, छू अमित स्पर्श से, हे अछूत!
तुमने पावन कर, मुक्त किए मृत संस्कृतियों के विकृत भूत!

सुख-भोग खोजने आते सब, आए तुम करने सत्य खोज,
जग की मिट्टी के पुतले जन, तुम आत्मा के, मन के मनोज!
जड़ता, हिंसा, स्पर्धा में भर चेतना, अहिंसा, नम्र-ओज,
पशुता का पंकज बना दिया तुमने मानवता का सरोज!

पशु-बल की कारा से जग को दिखलाई आत्मा की विमुक्ति,
विद्वेष, घृणा से लड़ने को सिखलाई दुर्जय प्रेम युक्ति;
वर श्रम-प्रसूति से की कृतार्थ तुमने विचार-परिणीत उक्ति,
विश्वानुरक्त हे अनासक्त! सर्वस्व-त्याग को बना भुक्ति!

सहयोग सिखा शासित-जन को शासन का दुर्वह हरा भार,
होकर निरस्त्र, सत्याग्रह से रोका मिथ्या का बल-प्रहार;
बहु भेद-विग्रहों में खोई ली जीर्ण जाति क्षय से उबार,
तुमने प्रकाश को कह प्रकाश, औ अंधकार को अंधकार!

उर के चरखे में कात सूक्ष्म युग-युग का विषय-जनित विषाद,
गुंजित कर दिया गगन जग का भर तुमने आत्मा का निनाद!
रंग-रंग खद्दर के सूत्रों में नव-जीवन-आशा, स्पृहा, ह्लाद,
मानवी-कला के सूत्रधार, हर लिया यंत्र-कौशल-प्रवाद!

जड़वाद जर्जरित जग में तुम अवतरित हुए आत्मा महान,
यंत्राभिभूत जग में करने मानव-जीवन का परित्राण;

बहु छाया-बिंबों में खोया, पाने व्यक्तित्व प्रकाशवान,
फिर रक्त-माँस प्रतिमाओं में फूँकने सत्य से अमर प्राण!
संसार छोड़ कर ग्रहण किया नर जीवन का परमार्थ-सार,
अपवाद बने, मानवता के ध्रुव नियमों का करने प्रचार;
हो सार्वजनिकता जयी, अजित! तुमने निजत्व निज दिया हार,
लौकिकता को जीवित रखने तुम हुए अलौकिक, हे उदार!
मंगल शशि लोलुप मानव थे विस्मित ब्रह्मांड-परिधि विलोक,
तुम केंद्र खोजने आए तब सब में व्यापक, गत राग-शोक;
पशु-पक्षी-पुष्पों से प्रेरित उद्दाम-काम जन-क्रांति रोक,
जीवन-इच्छा को आत्मा के, वश में रख, शासित किए लोक!
था व्याप्त दिशावधि ध्वांत भ्रांत इतिहास विश्व-उद्भव प्रमाण,
बहु-हेतु, बुद्धि, जड़ वस्तु-वाद मानव-संस्कृति के बने प्राण;
थे राष्ट्र, अर्थ, जन, साम्यवाद छल सभ्य जगत के शिष्ट मान,
भू पर रहते थे मनुज नहीं, बहु रूढ़ि रीति प्रेतों समान -
तुम विश्व मंच पर हुए उदित बन जग जीवन के सूत्रधार,
पट पर पट उठा दिए मन से कर नव चरित्र का नवोद्धार;
आत्मा को विषयाधार बना, दिशि पल के दृश्यों को सँवार,
गा गा - एकोहं बहु स्याम, हर लिए भेद, भव भीति-भार!
एकता इष्ट निर्देश किया, जग खोज रहा था जब समता,
अंतर-शासन चिर राम-राज्य, औ' बाह्य, आत्महन-अक्षमता;
हों कर्म निरत जन, राग विरत, रति-विरति-व्यतिक्रम भ्रम-ममता,
प्रतिक्रिया-क्रिया साधन-अवयव, है सत्य सिद्ध, गति-यति-क्षमता!
ये राज्य, प्रजा, जन, साम्य-तंत्र शासन-चालन के कृतक यान,
मानस, मानुषी, विकास-शास्त्र हैं तुलनात्मक, सापेक्ष ज्ञान;
भौतिक विज्ञानों की प्रसूति जीवन-उपकरण-चयन-प्रधान,
मथ सूक्ष्म-स्थूल जग, बोले तुम - मानव मानवता का विधान!
साम्राज्यवाद था कंस, बंदिनी मानवता पशु-बलाक्रांत,
श्रृँखला दासता, प्रहरी बहु निर्मम शासन-पद शक्ति-भ्रांत;
कारागृह में दे दिव्य जन्म मानव-आत्मा को मुक्त, कांत,
जन-शोषण की बढ़ती यमुना तुमने की नत, पद-प्रणत, शांत!
कारा थी संस्कृति विगत, भित्ति बहु धर्म-जाति-गत रूप-नाम,
बंदी जग-जीवन, भू-विभक्त, विज्ञान-मूढ़ जन प्रकृति-काम;
आए तुम मुक्त पुरुष, कहने - मिथ्या जड़-बंधन, सत्य राम,
नानृतं जयति सत्यं, मा भैः जय ज्ञान-ज्योति, तुमको प्रणाम!

भारतीय महाकाव्य और पुरुष विरह

वंदना कुमारी पाण्डेय

भारतीय परम्परा में विवाह को एक 'पवित्र बंधन' माना गया है। 'बंधन' शब्द अपने आप में बहुत कुछ व्यक्त करता है। 'प्रेम' तो कहीं भी, कभी भी और किसी से हो सकता है। 'प्रेम' की परिभाषा नहीं होती। इसे तौला भी नहीं जा सकता। साधारण मनुष्य से प्रेम हो या अदृश्य शक्ति से सब संभव है। हमारे देश की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है कि 'पत्नी' का स्थान पति से सदैव ऊँचा ही होता है।

'रामचरितमानस' में राम को मर्यादा पुरुषोत्तम कहा गया है। वे हमारे जीवन के आदर्श हैं। भाई-भाई का प्रेम इतना प्रगाढ़ है, जिसकी तुलना नहीं की जा सकती। पिता के आदेश का पालन, गुरु की आज्ञा, पति-पत्नी का संबंध सब हमारे प्रेरणा स्रोत हैं। 'सीताराम' यह शब्द विशेष महत्त्व रखता है। हम देखते हैं कि तुलसीदास जी पहले 'सीता' की आराधना करते हैं क्योंकि 'राम' को सबसे प्रिय सीता हैं। अनेक काव्यों की रचना की गयी परन्तु गिने चुने काव्य हैं जिसमें 'पत्नी' के वियोग में 'पति' की आँखों से आँसू निकलते हैं।

भारतीय संस्कृति में नारी का महत्त्वपूर्ण एवं आदरणीय स्थान रहा है। महर्षि मनु ने कहा कि जहाँ नारियों की पूजा होती है वहीं देवताओं का भी वास होता है, "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:।"

'पूजा' मतलब मंदिरों के देवताओं की पूजा भी है और भावनाओं की पूजा भी है। आज इस भाव में बहुत कमी आ गयी है क्योंकि 'स्त्री-पुरुष' को लेकर आपसी मत-भेद पैदा हो गये हैं। हमारी संस्कृति का आधा से अधिक हिस्सा महिलाओं के पास ही सुरक्षित है। 'धर्म' और 'मर्यादा' का पालन स्त्रियों को ही करना पड़ता है। पुरुष प्रधान समाज में भी पुरुष महिलाओं के बिना कोई भी धार्मिक काम नहीं कर सकता। जैसे राम सीता के बिना 'यज्ञ' में नहीं बैठ सकते थे। उन्होंने सोने की मूर्ति बनवाकर सीता को बगल में रखा।

कालिदास के नायक बहुधा अनेक पत्नियों वाले होते हैं, किन्तु प्रेमी के रूप में वे एक से ही हार्दिक स्नेह करते हैं। दिलीप की अनेक पत्नियाँ हैं लेकिन वह प्रेमी सुदक्षिणा के हैं। यही हाल दुष्यंत का है लेकिन इससे भिन्न उनके प्रेमी पात्र हैं जो एकपत्नीव्रती हैं। इसी प्रकार शिव और पार्वती का प्रेम है। इंदुमति के लिए अज की उक्ति साहित्य के इतिहास में अद्‌भुत है-

"गृहिणी सचिव: सखी मिथ: प्रिय शिष्या ललिते कलाविधौ।
करूणा विमुखेन मृत्युना हरता त्वां वद किं न में हृतम्।।"१ (रघुवंशम् ८वाँ सर्ग ६७ श्लोक सं.)

इंदुमती ने पिता के कहने से नहीं, स्वेच्छा से अज को स्वीकार किया था। भारतीय परम्परा में स्वयंवर को विशेष महत्त्व दिया गया था। प्राचीन काल की स्त्रियाँ अपना वर चुनने के लिए स्वतंत्र थीं। स्त्रियाँ कहती हैं कि स्वयंवर के बिना इंदुमती को आत्मतुल्य पति कैसे प्राप्त होता। इसीलिए वह गृहिणी, सचिव, सखी, शिष्या सभी कुछ हैं। उनके न रहने से अज के लिए संसार सूना-सूना रहता है।

'यूरोप में प्रेम के सबसे बड़े गायक शेली तक में पत्नी क्या, किसी प्रेमिका के लिए भी ऐसी उत्कट प्रेम-व्यंजना नहीं है। यूरोप की अधिकांश मध्यकालीन कविता में विवाह-संबंध से बाहर अवैध प्रेम का कीर्तन है। केवल मिल्टन ने अपने महाकाव्य 'पैराडाइज लॉस्ट' में विवाहित प्रेम का अभिनन्दन किया है।' ("आस्था और सौंदर्य" - रामविलास शर्मा)

प्रेम नर-नारी में असमानता का भेद नहीं करता। विरही पुरुष भी होता है और नारी भी। संस्कृत साहित्य की अगर हम बात करें तो कालिदास के काव्यों में यह विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है कि प्रेम की परिभाषा क्या है? 'रघुवंशम् महाकाव्य' में अज अपनी पत्नी को सदा के लिए खोने के बाद करुण विलाप करते हैं। रघुवंशम् में ही श्रीराम अपनी धर्मपत्नी सीता को रावण द्वारा अपहरण किये जाने पर विक्षिप्त अवस्था में दिखलायी पड़ते हैं। श्रीराम सीता से स्वयं कहते हैं कि -

"एत्द्विरेर्माल्यवत: पुरस्तादाविर्भवत्वम्बरलेखि श्रृङ्गम।
नवं पयो यत्र धनैर्मया च त्वद्धिप्रयोगाश्रु समं विसृष्टम्।।" ("रघुवंशम्" - कालिदास)

यह माल्यवान पर्वत है। यह पर्वत गगन स्पर्शी है। जब वहाँ बादलों ने नया जल बरसाना आरम्भ किया था, तब तुम्हारे न रहने से मेरी आँखें भी जल बरसानें लगी। अर्थात् यहाँ बरसते हुए मेघों को देखकर तुम्हारे लिए मैं खूब रोया था।

"इमां तटाशोकलतां च तन्वीं स्तनाभिरामस्तबकाभिनम्राम्।
त्वत्प्राप्ति बुद्धया परिरब्धुकाम: सौमित्रिणा साश्रुरहं निषिद्ध:।।" ("रघुवंशम्" - कालिदास)

श्रीराम सीता से कहते हैं कि तुम्हारे वियोग में मैं ऐसा पागल हो गया था कि अशोक लता की पतली डाली को ही गले लगाने लगा, मुझे लगा कि तुम सामने हो। तब मेरे इस पागलपन को देखकर लक्ष्मण ने रोते हुए मुझे वहाँ से हटा दिया।

अज और श्रीराम की अपनी-अपनी पत्नियों के साथ न रहने पर जो स्थिति होती है वह साधारण मनुष्य तो क्या हमारे यहाँ भगवान के प्रेम में भी परिलक्षित होती है। श्रीराम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। पति-पत्नी के संबंध को हमारे काव्यों में जीवित रखा गया है क्योंकि यह अटूट है। पार्वती की सखियों ने उन्हें आशीर्वाद दिया, 'अखण्डितं प्रेम लभस्व।' आदर्श प्रेम अखण्डित ही होता है। पार्वती शिव की एकमात्र पत्नी ही नहीं, उनके आधे शरीर की स्वामिनी भी हैं।

'कुमारसंभवम्' में शिव और पार्वती के अखण्ड प्रेम का वर्णन कालिदास ने बहुत ही रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। यौवन और सौंदर्य से कालिदास के प्रेम का घनिष्ठ संबंध है। भोगवाद के अतिरिक्त उनमें भरे-पूरे जीवन की आनंद कामना है। जैसे रंग भरने से चित्र खिल उठता है, वैसे ही यौवनागम से नारी का सौंदर्य निखर जाता है। कोयल स्त्रियों को मान तजने की सीख देती है क्योंकि यौवन चला जाने पर फिर नहीं आता। उमा का सौंदर्य 'पापवृतये न' था। शारीरिक सौंदर्य के वर्णन में कालिदास जहाँ विभिन्न अंगों की अलग-अलग सुन्दरता की चर्चा करते हैं, वहाँ समग्र रूप का आभास देने के लिए वह अपार्थिव कल्पनालोक की वस्तु बना देते हैं। शिव उमा के लिए कहते हैं- 'त्रिलोक सौंदर्य मिवोदितं वपु:।' उमा के शरीर में मानो तीनों लोकों का सौंदर्य उदय हो गया था।" ("आस्था और सौंदर्य" - रामविलास शर्मा)

प्रेम वास्तव में क्या है, कैसा है, इसकी सुखद अनुभूति कब और कैसे होगी, यह कल्पना हमारे कवियों ने अपने साहित्य में बहुत ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत की है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण हम कालिदास के 'मेघदूतम्' को पाते हैं। वासना के कलुष से घिरे होने पर भी वह केवल अपनी प्रिया से स्नेह करता है और वह प्रिया भी अलका के विलासमय वातावरण में पूर्वी क्षितिज पर हिमांशु की शेष कलामात्र सी शय्या पर पड़ी रहती है। यक्ष की पत्नी 'युवतिविषये सृष्टि राघेव धातु:' है। विधाता ने अपनी प्रथम कृति के रूप में उसी को सँवारा था। यक्ष अपने प्रेम का संदेशवाहक 'मेघ' को बनाता है। उसकी पीड़ा इतनी बढ़ गयी थी कि वह अपने प्रेम का प्रदर्शन कैसे और किससे करे समझ नहीं पाया। यह काव्य प्रेमीजनों के लिए प्रेरणादायक है। यहाँ नायक विरह की वेदना प्रकट कर रहा है, एक वियोगी पुरुष है। यह हमारे साहित्य की विशेषता है। भारतीय साहित्य नारी के विरह का वर्णन ही नहीं करता बल्कि विरही पुरुष का भी वर्णन उतनी ही कुशलतापूर्वक करने में सक्षम है। यह कालिदास के काव्य में साफ दिखलायी पड़ता है।

डॉ. अग्रवाल ने 'मेघदूतम्' के संबंध में लिखा है, "यह भी सत्य है कि कालिदास के समान उस ग्रंथ का गंभीर किन्तु प्रमोदपूर्ण पारायण आज तक कोई नहीं कर सका है। इसका कारण यह है - काव्य में कांता-सम्मित उपदेश दिया जाता है। इसीलिए मेघदूत के अध्यात्म-ज्ञान का ऊपर से कुछ पता नहीं चलता। कवि ने स्थान-स्थान पर जो स्कंद, शिव और कैलास का उल्लेख किया है। ऐसा लगता है यक्ष ने अपना संदेश अपनी प्रिया के प्राणों को सहारा देने की इच्छा से नहीं भेजा, वरन कामरूप मेघ को अध्यात्मवाद सिखाने के लिए उसे 'कान्ता सम्मित' उपदेश दिया है।" ("आस्था और सौंदर्य - रामविलास शर्मा)

भारतीय समाज में 'पत्नी' का स्थान प्रतिष्ठा के साथ जुड़ा है। पत्नी 'वाइफ' नहीं 'धर्मपत्नी' कही गयी है। हमारे समाज में परिवार की संकल्पना पत्नी के बिना अधूरी है। 'गृहिणी, 'गृहस्वामिनी' जिसका सीधा मतलब है कि घर की स्वामिनी पत्नी ही होती है। 'रामचरितमानस' में तुलसीदास ने 'सीताराम' को ऊँचा माना है। प्राचीन काल में स्त्रियों का बहुत ही ऊँचा स्थान था। ऐसा नहीं है कि आज स्त्रियों का स्थान नीचे हो गया है। हाँ लेकिन हम कह सकते हैं कि आज के समय में पाश्चात्य परम्परा को अपनाने की होड़ में स्त्री-पुरुष का संबंध प्रेम से काल्पनिक प्रेम में बदल रहा है। परिवार के संबंध बहुत कुछ आर्थिक विकास से निश्चित होते हैं, किन्तु उसका प्रतिबिम्ब नहीं हैं। सौंदर्येच्छा, यौन-प्रेम, संतान के प्रति स्नेह पशुओं में भी मिलता है; मानव समाज में वह सब विकसित होता है, कभी-कभी ह्रास की दिशा में भी चलता है जिससे मनुष्य पशुओं से नीचे गिर जाता है।" ("आस्था और सौंदर्य" - रामविलास शर्मा)

महाभारत में कहा गया है - 'नास्ति भार्या समं मित्रं नरस्यार्तस्य भेषजम्।' अर्थात् पत्नी जैसा मित्र और कोई नहीं होता, वह रोगी के लिए औषधि के समान है।
'न गृहं गृहमित्यादुर्गृहिणी गृहमुच्यते' घर अपने आप में घर नहीं होता, गृहिणी वास्तव में घर कही गयी है।

पार्वती जी के शिव से प्रेम और उनको प्राप्त करने की तपस्या भी अद्‌भुत है। पार्वती और शिवजी का दाम्पत्यजीवन अत्यन्त लोक विलक्षण है। विश्व-कल्याण के लिये विष को पीने वाले शिव जी पार्वती के लिए अत्यन्त प्रिय एवं आदर्श हैं। शिव के इस त्याग-तपस्यामय जीवन पर पार्वती को गर्व है।

भारतवर्ष के प्रत्येक प्रान्त की लोककथाओं में शिव और पार्वती के परस्पर प्रेम की कथाएँ हैं। शिव-पार्वती के दाम्पत्य जीवन ने सामान्य जनजीवन को कितना प्रभावित किया है और उनको वे कितने अपने लगते हैं, यह अनेक उपलब्ध लोककथाओं और लोकगीतों से प्रतीत होता है।

महाभारत में शिव-पार्वती के अद्‌भुत प्रेम के दर्शन होते हैं - "मम चार्धं शरीरस्य तव चार्धेन निर्मितम्। सुरकार्यकरी च त्वं लोकसंतानकारिणी।।" ("महाभारत" - व्यास)

शिव-पार्वती का प्रेम अनुकरणीय है। इसलिए शिव की पूजा हर कुमारी करती है क्योंकि पति रूप में शिव सबको प्यारे हैं; क्योंकि उन्होंने पार्वती को नारियों में श्रेष्ठ स्थान पर देखा है। शिवजी कहते हैं - 'तुम मेरी सहधर्मिणी हो। तुम्हारा शील-स्वभाव तथाव्रत मेरे समान ही है। तुम्हारी सारभूत शक्ति भी मुझसे कम नहीं है। तुमने तीव्र तपस्या भी की है। तुम्हारे द्वारा कहा गया स्त्री धर्म विशेष गुणवान् होगा और लोक में प्राणभूत माना जायेगा। मेरा आधा शरीर तुम्हारे आधे शरीर से निर्मित हुआ है। तुम देवताओं का कार्य सिद्ध करने वाली तथा लोक-संतति का विस्तार करने वाली हो।" ("महाभारत" - व्यास)

पति और पत्नी का यह सहधर्म अर्थात् साथ-साथ रहकर धर्माचरण करना मंगलमय है। आज के इस भाग-दौड़ में प्रेम की कमी नजर आ रही है। समाज में राम और शिव की बहुत आवश्यकता है। स्त्री और पुरुष दोनों के परस्पर सहयोग और प्रेम से ही संसार की सृष्टि हुई है। इसे हमेशा ऐसे बनाए रखने के लिए हमें प्रयास करते रहना चाहिए।

खूबसूरत जहान

डॉ. शशि मोहन ऋषि

कितना खूबसूरत है ये जहां
दोस्त-यार हैं मेहरबाँ यहां
ज़न्नत की मुझे चाहत नहीं
क्या-कुछ मिला यहाँ नहीं
ख़ुदा बख्शे मुझे सेहत अच्छी
ख़ुशी से गुज़र जायेगी ज़िंदगी
हैं कुछ ही पल तो बाकी
हैं कम, मगर बेशकीमती
सोच-समझ कर करूँगा इस्तेमाल इन्हें
ख़िदमत में दोस्तों की गुजार दूँगा इन्हें.

अंतिम तीन दिन

दिव्या माथुर

अपने ही घर में माया चूहे-सी चुपचाप घुसी और सीधे अपने शयनकक्ष में जाकर बिस्तर पर बैठ गई-- स्तब्ध।

जीवन में आज पहली बार, मानो सोच के घोड़ों की लगाम उसके हाथ से छूट गई थी। आराम का तो सवाल ही नहीं पैदा होता था। अब समय ही कहाँ बचा था कि वह सदा की भाँति सोफ़े पर बैठकर टेलीविज़न पर कोई रहस्यपूर्ण टी.वी. धारावाहिक देखते हुए चाय की चुस्कियाँ लेती।

हर पल कीमती था। तीन दिन के अंदर भला कोई अपने जीवन को कैसे समेट सकता है? पचपन वर्षों के संबंध, जी जान से बनाया ये घर, ये सारा ताम-झाम और बस केवल तीन दिन! मज़ाक है क्या? वह झल्ला उठी किंतु समय व्यर्थ करने का क्या लाभ। डाक्टर ने उसे केवल तीन दिन की मोहलत दी थी। ढाई या साढ़े तीन दिन की क्यों नहीं, उसने तो यह भी नहीं पूछा। माया प्रश्न नहीं पूछती, बस जुट जाती है तन-मन-धन से किसी भी आयोजन की तैयारी में, वह भी युद्ध स्तर पर।

बेटी महक होती तो कहती, ममा, 'स्लो डाउन।' जीवन में उसने अपने को सदा मुस्तैद रखा कि न जाने कब कोई ऐसी-वैसी स्थिति का सामना करना पड़ जाए। बुरे से बुरे समय के लिए स्वयं को नियंत्रित किया, ताकि वह मन को समझा सके कि इससे और भी तो बुरा हो सकता था।

ख़ैर, तीन दिन बहुत होते हैं। एक हफ़्ते में तो भगवान ने पूरी दुनिया रच डाली थी। बिगाड़ने के लिए तो एक तिहाई समय भी बहुत होना चाहिए। किंतु उसे बिगाड़ कर नहीं ये घर सँवार के छोड़ना है। संपत्ति को ऐसे बाँटना है कि किसी को यह महसूस न हो कि अंधा बाँटे रेवड़ी, भर अपने को दे। संसार से यों विदा लेनी है कि लोग याद करें। कमर कसकर वह उठ खड़ी हुई। तीनों अलमारियों के पलड़े खोलकर माया लगी अपनी भारी साड़ियों, सूटों और गर्म कपड़ों को पलंग पर फेंकने। जैसे उस ढेर में दब जाएगी उसकी दुश्चिंता। छोटे बेटे वरुण की शादी को अभी एक साल भी तो नहीं हुआ। कितने कपड़े और गहने बनवाए थे माया ने। जैसे अपनी सारी इच्छाओं को वह एक ही झटके में पूरा कर लेना चाहती हो।

'हे भगवान! अब क्या होगा इन सबका?' समय होता तो वह भारत जाकर बहन भाभियों में बाँट देती। ऑक्सफैम में जाने लायक नहीं हैं ये कीमती साड़ियाँ पर उसकी बहुओं और बेटी को इस 'इंडियन' पहनावे से क्या लेना देना। रूपहली नैट की गुलाबी साड़ी को चेहरे से लगाए माया सोच रही थी कि इसे पहनने के लिए उसने अपना पूरा पाँच किलो वज़न घटाया था। मुँह माँगे दाम पर ख़रीदी थी ये साड़ी उसने रितु कुमार से। छोटी बहन तो बस दीवानी हो गई थी, 'जीजी, इस साड़ी से जब आपका दिल भर जाए तो हमें दे दीजिएगा, प्लीज़।' उसे तब ही दे देती तो छोटी कितनी खुश हो जाती। पर तब उसने सोचा था कि इसे पहन कर पहले वह अपने लंदन और योरोप के मित्रों की चर्चा का विषय बन जाए, फिर दे देगी। किसी ने ठीक ही कहा है, 'काल करे सो आज कर।' एकाएक उसे एक तरक़ीब सूझी। क्यों न वह इसे छोटी को पार्सल कर दे और साथ में ही भेज दे इसका मैचिंग कुंदन का सैट भी। कुंदन के सैट के नाम पर उसका दिल मानो सिकुड़ के रह गया। बड़ी बहू उषा को पता लगेगा कि सास ने साढ़े तीन लाख का सैट छोटी को दे दिया तो वह उसे जीवन भर कोसेगी। पर छोटी जितनी क़द्र भला बहुओं और बेटी महक को कहाँ होगी। माया चाहे कितना कहे कि वह किसी से नहीं डरती पर सच तो ये है कि वह मन ही मन सबसे ही डरती है अपने बच्चों से लेकर, सड़क पर चलते राहगीरों तक

से कि वे क्या सोचते होंगे, कहीं वे यह न कहें या कहीं वे वो न सोचें। पर अब वह वही करेगी जो उसका मन चाहेगा। वैसे भी, बच्चे अपने-अपने घरों में सुख से हैं। न भी हों तो उसने फ़ैसला कर ही लिया था कि वह अब कभी उनके घरेलू मामलों में दखलअंदाज़ी नहीं करेगी। सगे संबंधी और मित्र भी मरने वाले की अंतिम इच्छा का सम्मान करेंगे ही। फिर भी, न चाहते हुए भी माया दूसरों के लिए ही सोच रही थी। अपने लिए सोचने को रखा ही क्या है। मंदिर जाए, गिड़गिड़ाए कि भगवान बचा लो। ज़िंदगी के इस आख़री पड़ाव पर क्यों अपने लिए कुछ माँगे और माँगने से क्या कुछ मिल जाएगा। अब तक तो वह जब भी भगवान के आगे गिड़गिड़ाई है, सदा औरों के लिए। हर सुबह यही प्रार्थना करती आई है, 'भगवान सबका भला करना', या `जो भी ठीक समझो वही करना,' क्योंकि मनुष्य की हवस का तो कोई अंत नहीं। अमेरिका में तो सुना है कि लोगों ने हज़ारों डालर देकर मरणोपरांत अपने शवों के प्रतिरक्षण का प्रबंध करवा लिया है ताकि भविष्य में, जब भी टैकनौलोजी इतनी विकसित हो जाए, उन्हें जिला लिया जाए। माया को यह समझ नहीं आता कि ऐसा क्या है मानव शरीर में कि उसे सदा जीवित रखा जाए। गाँधी, मदर टेरेसा या मार्टिन लूथर किंग जैसों महानुभावों को सुरक्षित रख पाते तो और बात थी। अच्छी से अच्छी प्लास्टिक सर्जरी के उपलब्ध होने पर भी एलिज़ाबेथ टेलर जैसी करोड़पति सुंदरी भी कुरुप दिखती है। प्रकृति से टक्कर लेकर भला क्या लाभ। उसे जो करना था वह कर चुकी। बच्चे अपने-अपने घरों में सुख से हैं। न भी हों तो उसने फ़ैसला कर ही लिया था कि वह अब कभी उनके घरेलू मामलों में दखलअंदाज़ी नहीं करेगी।

माया एक अजीब-सी मन:स्थिति से गुज़र रही है। उसे लगता है कि कहीं कुछ अप्राकृतिक अवश्य है। वह परेशान है कि उसे मौत से डर क्यों नहीं लग रहा। हो सकता है कि अत्यधिक भय की वजह से उसने भय को अपने मस्तिष्क से 'ब्लॉक' कर रखा हो। जो भी हो, अच्छा ही है। अन्यथा भयवश न तो वह कुछ कर पाती और न ही ठीक से सोच ही पाती। बच्चों को बताने का कोई औचित्य नहीं। बेकार परेशान होंगे और उसकी नाक में दम कर डालेंगे। पिछले महीने ही की तो बात है जब उसे फ़्लू हो गया था। दुर्भाग्यवश वरुण और विधि घर पर थे। उन्होंने तीमारदारी कर करके माया की ऐसी की तैसी कर दी थी। उसे आराम से सोने भी नहीं दिया था। कभी दवाई का समय हो जाता तो कभी खिचड़ी का, कभी गरम पानी की बोतल बदलनी होती तो कभी गीली पट्टी। नहीं नहीं, चुपचाप मर जाना बेहतर होगा। बच्चों को भी तसल्ली हो जाएगी जब लोग कहेंगे कि माया बड़ी भली आत्मा रही होगी कि नींद में चल बसीं। वैसे, कह भर देने से ही कितनी तसल्ली हो जाती है या शायद दिल को समझा लेना आसान हो जाता होगा। लोगों के पास चारा भी क्या है। जीवन के हल में सीधे जुत जो जाना होता है। आजकल तो लोग तेरहवीं तक भी घर में नहीं रुकते। छुट्टियाँ ही कहाँ बचती हैं। साल में एक बार भारत जाना होता है। फिर परिवार और मित्रों के साथ दो या तीन बार योरोप की यात्रा पर भी जाना पड़ता है। पहले ज़माने में कभी लेते थे लोग छुट्टियाँ ऐसे कामकाज के लिए? माया तो हारी बीमारी में भी उठके दफ्तर चली जाती थी कि एक छुट्टी बचे तो मंडे बैंक हौलिडे के साथ जोड़ कर कहीं आस-पास ही हो आए। उसका मानना है कि इंग्लैंड की तनाव भरी जलवायु से जब तब निकल भागना आवश्यक है। वैसे भी यहाँ के बहुत से लोग मानसिक बीमारियों से ग्रस्त रहते हैं। जिसे देखिए वही 'टैन्स्ड' है।

माया भी 'टैन्स्ड' है। अपनी उँगलियाँ उलझाए वह सोच रही है कि पर्दों को धो डाले और घर की झाड़ पोंछ भी कर ले। मातमपुर्सी को आए लोग कहीं ये न कहें कि दूसरों को सफ़ाई पर भाषण देने वाली माया स्वयं इतने गंदे घर में रहती थी। आज तो केवल बुधवार है और घर की सफ़ाई करने वाली ममता तो शनिवार को ही आएगी। शनिवार को वे दोनों मिलकर घर की खूब सफ़ाई करती हैं और फिर दोपहर में एक नई हिंदी फ़िल्म देखने जाती हैं। शाम का खाना भी बाहर ही होता है। रात को ममता

को उसके घर छोड़ कर जब माया वापस आती है तो अपने साफ़ सुथरे फ्लैट में खुशबूदार बिस्तर पर पसर जाना उसे बहुत अच्छा लगता है। कभी-कभी तो इस संवेदना के रहते, वह सो भी नहीं पाती। उनके मना करने के बावजूद ममता उसे 'मैडम' कहकर ही पुकारती है और उसकी बहुत इज़्ज़त करती है। हालाँकि बच्चों को लगता है कि माँ ने उसे सिर पर चढ़ा रखा है, माया उसे अपने परिवार का एक सदस्य ही मानती है। कर्मठ, इमानदार और निष्ठावान है ममता, माया की तरह ही। शायद इसीलिए माया को उसका साथ पसंद है। उसकी सहेलियाँ उसके इस बर्ताव पर नाक भौं चढ़ाती रहतीं हैं तो चढ़ाया करें।

नारायण को लेकर ममता कुछ अधिक ही परेशान है। उसका इकलौता बेटा नारायण, जिसके पिता की आकस्मिक मृत्यु हो गई थी, बुरी संगत में पड़ कर एक गुंडे के गिरोह में ड्राइवरी कर रहा है। आजकल उसकी इच्छा है कि उसके प्रवास के दौरान नारायण एक बार लंदन घूमने आ जाए। माया ने दिल्ली में अपने भाई पारस के ज़रिए उसका पासपोर्ट बनवा दिया है और वीज़ा भी लग ही जाएगा। ममता के इसरार पर माया ने पिछले साल पटना के किसी अधिकारी को इस बाबत लिखा भी था पर वहाँ से आज तक कोई जवाब नहीं आया। दिल्ली, मुंबई जैसे शहर होते तो शायद कोई जान पहचान निकल भी आती। हर शनिवार ममता बड़ी आस लिए आती है, 'मैडम कोई चिट्ठी पत्री आई।' न में सिर हिलाती माया सोचती है कि कुछ करना चाहिए किंतु वह कर क्या सकती है? अपना बेटा होता तो क्या वह चुप बैठ जाती? उसका मन कई बार होता है कि बारक्लेज़ बैंक के पाँच हज़ार के बौंड्स ममता को दे दे ताकि वह नारायण को उन गुंडों से बचा सके। किंतु फिर वही दुविधा कि मेहनत से कमाए उसके धन का सीधी-सादी ममता कहीं दुरुपयोग न कर बैठे।

बच्चों को क्या, किसी और को भी यदि ये पता लग गया कि उन्होंने इतनी बड़ी रकम ममता को दे दी तो वे उसे पागल समझेंगे। किंतु धन का इससे अच्छा उपयोग भला क्या हो सकता है। महक होती तो कहती, 'ममा, डू व्हाट यू लाईक, इटज़ यौर मनी आफ़्टर ऑल।' वरुण और विधि को उसके धन से कुछ लेना देना नहीं। विधि साई बाबा ट्रस्ट की सदस्य है, कभी बाढ़ पीड़ितों के सहायतार्थ जाती है तो कभी किसी सेवा शिविर के लिए काम करती है। अरुण कहता है कि उन्हें पैसे की कोई कद्र नहीं और ये भी कि यदि माँ चाहें तो उनका पैसा वह किसी अच्छी जगह इन्वैस्ट कर सकता है। इकलौती संतान के नाते, उषा को हर चीज़ अपने नाम करवाने की पड़ी रहती है। इतनी बड़ी रकम उन्होंने पहले किसी को दी भी तो नहीं। उनकी मृत्यु के बाद कहीं बच्चे बेचारी ममता पर कोई मुकदमा ही न ठोक दें। दुनिया में क्या नहीं होता। माया का सोचना ही उसका दुश्मन है पर सोच पर किसी का क्या बस।

बस अब और नहीं सोचेगी माया। अभी जाकर वह बौंड्स भुनवा लेगी और शनिवार को ममता को दे देगी। कहीं वह शुक्रवार को ही स्वर्ग सिधार गई तो? हालाँकि वह शुक्रवार की शाम को मरे तो बच्चों और सगे संबंधियों को सप्ताहांत मिल जाएगा। इतवार को ही स्विटज़रलैंड से वरुण और विधि भी छुट्टियाँ मना कर लौट आएँगे। माया को अच्छा नहीं लगा कि आते ही उन्हें कोई बुरी ख़बर दे पर किया क्या जा सकता है।

बैंक जाते समय माया सोचने लगी कि किसी के आख़री वक्त में सबसे विशेष बात क्या हो सकती है? क्यों वह सीधे कपड़ों गहनों की तरफ़ भागी? क्या ये मामूली चीज़ें उसके लिए इतना महत्व रखती हैं? आज तक तो वह यही सोचती आई थी कि उसके मरने के बाद बेटे बहु उसका तमाम बोरिया-बिस्तर बोरियों में भर कर ऑक्सफ़ैम या किसी और चैरिटी को दे आएँगे। समय के अभाव में शायद उसका सामान वे कूड़ेदान में ही न फेंक दें। ख़ैर, ये सोचकर क्या वह अपना अमूल्य समय व्यर्थ नहीं गँवा रही? उसे क्या लेना देना इस भौतिक सामान से किंतु किसी के काम आ जाए तो अच्छा ही है। भारत में

कई परिवार इन चीज़ों से अपने बहुत से तीज त्योहार मना सकते हैं। ऑक्सफ़ैम वाले क्या समझेंगे भारतीय पहनावे को? वे इन्हें 'रीसाइकिलिंग' के लिए दाहित्र में ही न कहीं डाल दें।

पिछले दो वर्षों में ही माया ने दो मौतें देखीं थीं और दोनों ही मृतकों ने कोई वसीयत नहीं छोड़ी थी। अभी अर्थी भी नहीं उठी थी कि बच्चों ने घर सिर पर उठा लिया। जिन माँ बाप ने अपना जीवन अपने बच्चों पर न्योछावर कर दिया था, उनकी आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना करने की बजाय उनके बच्चे उन्हे ही भला बुरा कह रहे थे। ख़ैर, उसे इस सब की परवाह नहीं है। उसने अपनी सारी जायदाद, गहने, शेयर इत्यादि बाँट दिए हैं सिवा इन कपड़ों और कुछ पारिवारिक गहनों के और इन्हीं की वजह से वह कल रात भर ठीक से सो भी नहीं पाई थी। इन भौतिक चीज़ों में मृत्यु जैसी विशेष बात भी डूब के रह गई थी।

सुबह उठते ही नहा धो कर माया बैठ गई आईने के सामने। बिना मेक अप के चेहरा कैसा बेरंग लग रहा था, करेले-सी झुर्रियाँ और अर्बी सा रंग। उसने कहीं पढ़ा था कि जिसने जीवन में बहुत दुख झेलें हों, केवल वही एक अच्छा विदूषक हो सकता है। ठंड की गुनगुनी धूप-सी मुस्कुराहट उसके चेहरे पर फैल गई। किंतु ये झुर्रियों से भरा चेहरा मृत्यु के पश्चात कैसा लगेगा? जब लोग बक्से में रखे उसके पार्थिव शरीर के चारों ओर घूमकर श्रद्धांजलि अर्पित करेंगे तो उन्हें कहीं मुँह न फेर लेना पड़े। माया को आकर्षक लगना चाहिए और ये मेकअप आर्टिस्ट पर निर्भर करेगा कि वह कैसी दिखाई दे। शायद और लोग भी इस बारे में चिंतित होते हों। हिम्मत करके उसने अंत्येष्टि निदेशक का नंबर घुमाया।

'हेलो, हाउ मे आइ हेल्प यू?' मीठी आवाज़ में स्वागती ने पूछा।

माया ने झिझकते हुऐ पूछा, 'सौरी टु बौदर यू, आइ हैड बुक्ड ए कौफ़िन फ़ॉर माइसेल्फ दि अदर डे, आइ वंडर इफ समवन कुड टेक केयर ऑफ माई मेकअप एंड क्लोद्स आफ़्टर आई एम डेड. . .।'

'ऑफ़ कोर्स मैडम, यौर विश इज़ अवर कमांड।' स्वागती की वरदायनी अदा पर माया मुस्कराने लगी। उसने सोचा कि वह मेकअप आर्टिस्ट को अपना भरा पूरा वैनिटि केस ही दे देगी ताकि कई अन्य भारतीय महिला मृतकों का भी उद्धार हो जाए। गोरे गोरियों के रंग का मेकअप तो इन लोगों के पास होता है किंतु किसी भारतीय महिला ने शायद ही कभी ऐसी माँग की हो। उसे कहाँ फ़ुर्सत इस आडंबर की। उसे यकायक याद आई मीना कुमारी की, जो पूरी साज सज्जा के साथ दफ़नाई गई थी। चलो मेकअप और कपड़ों का तो बंदोबस्त हो गया। उसने सोचा कि क्यों न वह अपने बाल भी ट्रिम करवा ले? उसे अपने हेअरड्रैसर से भी विदा ले लेनी चाहिए। पिछले तीन दशकों में दोनों के बीच एक अच्छा समझौता हो गया है। वह जानता है कि कब उसके बालों को पर्म करना है, कब रंगना है या कब सिर्फ़ ट्रिम करना है। कभी माया उल्टी सीधी माँग कर भी बैठे तो वह साफ़ इनकार कर देता है, 'नहीं, ये आप पर अच्छा नहीं लगेगा', या 'अपनी ज़रा उम्र तो देखो माया।' हालाँकि माया को आज भी लगता है कि वह एक बार उसके बालों को किसी सुर्ख रंग में रंग दे।

माया झट से उठी और कार में बैठकर चल दी वैम्बली हाई रोड की ओर। अभी कार को उसने दाईं ओर मोड़ा ही था कि उसने सोचा कि पहले उसे अपने होंठ के ऊपर उग आए बालों को ब्लीच करवा लेना चाहिए। उसने एक ख़तरनाक यू टर्न मारा। यदि कोई पुलिस वाला देख लेता तो उसे अवश्य ही धर लेता। 'ऑन दि स्पौट फ़ाईन' अलग देना पड़ता। पर अब डर किस बात का और ये पैसा किस काम का? यकायक उसने निर्णय लिया कि चाहे कितने भी पाउंड लगें, वह रीजैंट स्ट्रीट पर स्थित सबसे महँगे ब्यूटी पारलर में जाकर मसाज, ट्रिमिंग, भवें, ब्लीचिंग और फ़ेशल आदि सब करवा लेगी।

'टी टूँ टी टूँ' का शोर मचाती एक एम्बुलेंस पास से गुज़री तो कार को धीमा करके माया एक तरफ़ हो गई। न जाने किसको दिल का दौरा पड़ा हो या दुर्घटना में घायल कोई दम तोड़ रहा हो। यदि

समय पर डॉक्टरी सहायता मिल जाए तो कई मौतों को बचाया जा सकता है पर ये तो सब नसीब की बातें है। एकाएक माया को ध्यान आया कि उसने अभी तक अपनी आँखे भी दान नहीं की थीं। आँखे ही क्यों, गुर्दे, फेफड़े, दिल आदि उसे अपने सभी अंग दान कर देने चाहिए। साथ तो ये जाएँगे नहीं उसके। किसी के काम ही आ जाएँ तो अच्छा है। किंतु उसके बूढ़े अंग भला किसके काम आएँगे? डॉक्टरों को अनुसंधान के लिए भी तो मृत शरीरों की आवश्यकता पड़ती होगी। क्यों न वह अपना पूरा शरीर ही दान कर दे ताकि जिसे जो चाहिए, ले ले। बाकी के बचे खुचे टुकड़ों का क़ीमा बना कर खाद में डाले या . . .। माया भी कभी-कभी कैसी पागलों जैसी बातें सोचती है पर अस्पतालों से जो मनो अंग-प्रत्यंग प्रतिदिन फेंके जाते हैं, वे कहाँ जाते होंगे? प्लास्टिक के थैलों से लेकर दही के डिब्बों तक माया कूड़े में कुछ नहीं फेंकती। जहाँ देखिए कचरा ही कचरा। लोगों को रीसाइक्लिंग की ओर ध्यान देना होगा नहीं तो ये विश्व अवश्य तबाह होकर रहेगा।

अस्पताल जाकर वह अपना समूचा शरीर दान तो कर आई किंतु मन में कई संदेह आते-जाते रहे। एक दुर्घटना में माया के दादा की उँगली कट गई थी। उनकी मृत्यु के उपरांत, दादी ने विशेष तौर पर कृत्रिम उँगली लगवा कर उनका दाह संस्कार करवाया था। उनका विचार था कि यदि दादा को उनके सभी अंगों के साथ नहीं जलाया गया तो वह अगले जन्म में बिना उँगली के पैदा होंगे। हो सकता है, क्योंकि माया ने अपना पूरा शरीर दान कर दिया है, कि माया का जन्म ही न हो। वह यह भी मानती है कि हर जन्म में मनुष्य अपने को विकसित करता है और जब वह पूरी तरह से परिपक्व हो जाता है, तब ही वह परमात्मा में विलीन होने में समर्थ होता है। माया को लगता है कि वह तो एक बच्चे से भी गई गुज़री हैं। बच्चे भी जब-तब कहते रहते हैं, 'ममा, यू आर ए चाइल्ड' या 'ममा, यू शुड ग्रो नाओ।' वह कहाँ इस योग्य कि भगवान उसे अपने में लीन कर सकें। अभी तो वह सांसारिक भोगों में आकंठ डूबी है।

खुशबूदार मोमबत्तियों के मध्यम प्रकाश में तैरते भारतीय शास्त्रीय संगीत में डूबते-उतरते उसके शरीर की मुलायम और सधे हाथों द्वारा मालिश ने उसे स्वर्ग में पहुँचा दिया। उसे लगा कि तन से मानो मनों मैल उतर गया हो। मन हवा से बातें कर रहा था। शायद संसार के ये छोटे-छोटे सुख-दुख ही स्वर्ग और नर्क हों। ब्यूटी पारलर से निकली तो पहली बार माया ने जाना कि लोग अपने ऊपर इतना पैसा क्यों खर्च करते हैं। वह सचमुच कितनी मूर्ख थी कि जीवन भर दाँत से भींचकर पैसा खर्च करती रही। पैसा होते हुए भी ऐसे सुख का उपभोग नहीं कर पाई। हालाँकि उसकी बहुएँ नियमित रूप से ब्यूटी पारलर और जिम जाती हैं। विधि तो उनसे भी चलने को कहती रहती थी। किंतु वह उसे सदा हँस कर ये जवाब देकर टाल देती थी, 'बूढ़ी घोड़ी लाल लगाम।'

आज वह बीसियों साल बाद गुनगुना उठी, 'ऐ री मैं तो प्रेम दीवानी, मेरा दर्द न जाने कोय' पर कमज़ोरी के मारे आवाज़ खींच नहीं पाई और चुप हो गई। सोचा कि घर जाकर कुछ रियाज़ करेगी और फिर गाने की कोशिश करेगी। अभी तो उसे ज़ोरों की भूख लगी थी। सामने ही क्रेज़ी हौर्स पब था, जो फ़िश एण्ड चिप्स के लिए मशहूर था। माया उसमें ही जाकर एक कोने में बैठ गई। किसी के फ्यूनरल से लौटी भीड़ शराब और सैंडविचेज़ में डूब-उतर रही थी, 'फ़ार सच ए यंग फेलो, ही वाज़ एन एलीफैंट, माइ शोल्डर स्टिल हर्टस', एक लंबा चौड़ा गोरा युवक अपने कंधे दबाता बोला और उसके अन्य साथियों ने भी उसकी हाँ में हाँ मिलाई, 'ही डाइड ईटिंग, यू नो।'

माया ने सोचा कि अमेरिका में अर्थी उठाने वालों का क्या हाल होता होगा क्योंकि वहाँ तो हर तीसरा व्यक्ति मोटापे से ग्रस्त है। दो ही दिन बचे हैं खाने को। यदि वह दो दिन कुछ न भी खाए तो भला उसका कितना वज़न कम हो जाएगा। बेचारी ने सलाद और संतरे के जूस का ही और्डर दिया।

जल्दी से खा पीकर वह सीधे जिम पहुँची कि यदि वह जम कर व्यायाम करे तो एक किलो वज़न तो वह घटा ही सकती है। कम से कम उसके बेटे ये तो नहीं सोचेंगे कि ममा कितनी भारी थी, उनके कंधे तो नहीं दुखेंगे।

खाने से उसे यह भी याद आया कि जीजाजी की तेरहवीं के अवसर पर बनवाई गई कद्दू की सब्ज़ी को लोग आज भी याद करते हैं। पर बच्चों को तो ये भी नहीं पता होगा कि कद्दू क्या होता है। अपनी तेरहवीं का मेन्यु भी वह स्वयं ही बना के रख दे तो बच्चों का एक और सिरदर्द दूर हो जाए। कहीं उसके बच्चे भी ये न सोचें कि माँ को उन पर ज़रा भी विश्वास न था तभी तो सारे इंतज़ाम करके गई पर उसे कहाँ बस था स्वयं पर। क्रिसमस के कार्ड तक तो वह अक्टूबर में लिख कर रख लेती है। अच्छा हुआ कि केवल तीन दिन का ही नोटिस मिला अन्यथा मृत्यु की तैयारी में वह महीनों लगी रहती।

घर वापस आकर उसने अपनी तसल्ली के लिए एक फ़ाइल खोल ही ली। पहले पन्ने पर अंत्येष्टि निदेशक, उसकी सहायक और दो तीन जाने माने खान-पान प्रबंधकों के नाम, पते, फ़ोन और उनके ईमेल आदि लिख दिए, अपनी एक टिप्पणी के साथ कि वे चाहें तो मौसा जी की तेरहवीं पर सपना केटरर द्वारा परोसा गया खाना ही दोबारा ऑर्डर कर सकते हैं जो सभी को बहुत पसंद आया था। हाँ, यदि वे कुछ नया या आधुनिक आयोजन करना चाहें तो माया को कोई आपत्ति नहीं होगी।

आगंतुकों की भीड़-भाड़ में घर की सफ़ाई, चाय पानी के इंतज़ाम के लिए ममता का होना आवश्यक है। हालाँकि माया की मृत्यु का समाचार सुन कर कहीं उसके हाथ पाँव ही न छूट जाएँ। बेटे का जीवन सँवारने के लिए ममता रात दिन लोगों के घरों में सफ़ाई करती है। वह तो शायद कभी ये भी नहीं जान पाती होगी कि कब फूल खिले, कब पत्ते झड़ें या कब बरसात हुई। 'नारायण, नारायण' जपती वह पोचे मारती है, 'नारायण, नारायण' करती वह बर्तन धोती है और 'नारायण, नारायण' करके उसने माया की नाक में दम कर रखा है। बर्फ़ में भी वह बिना मोज़े पहने निकल पड़ती है घर से। दास्तानों की तो बात दूर है। अकड़े हाथों से न जाने कैसे काम करती है। ठंड के मारे उसके पैरों की बिवाइयों में खून भी जम जाता है।

ममता एक भारतीय राजनयिक और उनके परिवार के साथ लंदन आई थी, जिन्हें कार्यवश जल्दी ही स्वदेश वापस जाना पड़ा। वे उस को दो वर्षों के लिए यहीं छोड़ जाने को राज़ी हो गए थे कि यहाँ वह कुछ पैसा कमा लेगी। नारायण तुला है किसी भी क़ीमत पर माँ के पास आने को और ममता दिन रात यही सोचकर डरती रहती है कि यदि उसकी मंशा किसी को भी पता लग गई तो गुंडे उसका न जाने क्या हश्र करें। नारायण का पासपोर्ट बन चुका है और माँ के पास आने की बेचैनी में उसे लगता है कि माँ जल्दी से टिकट क्यों नहीं भेज रही। भूखे प्यासे रह कर पैसा जोड़ने के सिवा वह और क्या कर सकती है। बच्चे कहाँ समझते हैं माँ की मजबूरियाँ, उसकी बेबसी और उसकी चिंता।

बच्चे क्या जाने कि मृत्यु क्या होती है। उन्हें तो छोटी बड़ी हर चीज़ चाहिए। माया की पोती, रिया, जब केवल ढाई वर्ष की थी तो दादा की बेशकीमती घड़ी लेने की ज़िद कर रही थी। माया ने हँसी-हँसी में कह दिया कि दादा जी के बाद ये सब उसी का ही तो है। रिया ने झट पूछा, 'दादी, वैन विल दादु डाई?' माया सन्न रह गई थी। अरुण ने बच्ची को एक थप्पड़ मार दिया। रोती हुई रिया को उषा घसीट कर अपने शयनकक्ष में ले गई, क्रोध में ये कहती हुई, 'आर यू मैड, अरुण?'

रिया बच्ची थी और नहीं जानती थी कि उसे घड़ी तो अवश्य मिल जाएगी पर वह अपने प्यारे दादु को खो देगी। वैसे कितने ही लोग हर रोज़ अपने संबंधियों के मरने की राह देखते हैं। अभी हाल में ही केवल एक हज़ार डॉलर्स के लिए दो पोतों ने मिल कर अपनी दादी की हत्या कर डाली। दहेज की वजह से बहुओं की हत्या का भी कारण यही लालच है। माया सोचती है कि अपने जीते जी ही बच्चों को

सब दे देना चाहिए। किंतु हवस का तो कोई ठिकाना नहीं। जितना पैसा माँ बाप दहेज़ में लगाते हैं, कितना अच्छा हो कि यदि वे अपनी बच्चियों की पढ़ाई लिखाई पर खर्च करें ताकि वे अपने पाँव पर खड़ी हो सकें, उनके बुढ़ापे की लाठी बन सकें पर न जाने क्यों आज भी इसकी अपेक्षा तो बेटों से ही की जाती है।

दो बेटों के होते हुए भी आज माया कितनी अकेली है। हालाँकि वे माँ को अपने पास रखने को सहर्ष तैयार हैं, पर उनका मन किसी के साथ रहने को माने तब न। एक महक ही है जो बिना नागा फ़ोन पर उनका हालचाल पूछती रहती है। जब मौका मिलता है, आ जाती है, उनके सिर में तेल मलती है, उनके नए पुराने कपड़े छाँटती है और अब भी उनसे चिपट कर सोती है। महक और पीटर कभी-कभी उसे ज़बरदस्ती सेंट एंड्रूज़ ले जाते है। किंतु वही बेटियों के घर में रहने-खाने की बात उसे खटकती है। जबकि यहाँ सासें दामादों के यहाँ रहती हैं। माया सोचती है कि वह स्वयं भी कितनी दोगली है कि एक तरफ़ जहाँ वह दर्शन और आदर्श बघारती है, दूसरी तरफ़ उन्हीं बातों के लिए दूसरों की निंदा करती है। जैसी भी है, माया अब तो बदलने से रही। बुराइयाँ किसमें नहीं होतीं, अच्छाइयाँ भी उसमें कम नहीं। कोई ज़रा माया से सहायता माँग तो ले, चाहे उसके पास समय या हिम्मत हो न हो, वह न नहीं कर सकती। उत्साह में तो वह ये भी भूल जाती है कि किसका काम है, क्या काम है, उसके पास समय होगा भी कि नहीं। पूरे ज़ोर-शोर से जुट जाती है। व्यवस्था का कोई भी पहलू मजाल है कि उसकी आँख से छूट जाए। शवपेटिका की व्यवस्था माया कर ही चुकी थी। बच्चों पर छोड़ देती तो वे सबसे महँगी लकड़ी का सुनहरी कुंडों से जड़ा बक्सा ही ख़रीदते। शव को कपड़े में लपेटकर भी काम चलाया जा सकता है। भारत में लोग कितने यूज़र फ्रेंडली हैं। हर चीज़ को रीसाईक्ल करते हैं। भाड़ ही में तो झोंकना है, पानी में पैसा बहा देने का क्या फ़ायदा। इससे तो वो पैसा किसी ग़रीब के काम आ जाए तो अच्छा हो। पर कौन देकर जाता है कुछ ग़रीबों को। कब से सोच रही है माया कि रॉयल स्कूल ऑफ़ ब्लाइंड की सहायता करने को पर बात है कि बस टलती चली जाती है। वह कल अवश्य जाएगी। हालाँकि पिछले हफ़्ते ही उसने कुछ धन हरे रामा हरे कृष्णा वालों को दिया था पर उस दान से उसे कुछ भी तृप्ति नहीं मिली थी। वह घंटों बैठी सोचती रही कि उन्हें कितना पैसा दान दे, सब कुछ उन्हीं को दे दे, या दे भी कि नहीं।

नब्बे प्रतिशत तो सुना है धन इकट्ठा करने वालों की जेब में चला जाता है। गोरे लोग कितना दान करते हैं। वे तो कभी नहीं सोचते कि पैसा कहाँ जा रहा है। जिनके मन में लालच हो, उन्हें तो बस कोई बहाना चाहिए। वह मन ही मन शर्मिंदा हो उठी। वास्तव में तो वह अधिक से अधिक धन बच्चों के नाम छोड़ना चाहती है। हालाँकि वह जानती है कि उषा तो यही कहेगी, 'हमारे हिस्से में बस इतना ही आया, मम्मा वरुण और विधि को ज़रूर अलग से दे गईं होंगी।' विधि को कुछ भी दो वह यही कहती है, 'मम्मी जी पहले आप महक जीजी और भाभी से पसंद करवा लीजिए, हम बाद में ले लेंगे।' न जाने अरुण और उषा सदा यही क्यों सोचते हैं कि माया वरुण और विधि को ही अधिक चाहती हैं। कोई माँ से पूछे कि उसे अपनी कौन-सी आँख प्यारी है।

माया को लगता है कि जैसे-जैसे व्यक्ति उम्र में बड़ा होता जाता है, अनासक्त होने के बजाय आसक्त होता जाता है। जहाँ विधि और महक को पैसे अथवा चीज़ों की ज़रा परवाह नहीं, वहीं उषा को और स्वयं उसे छोटी-छोटी चीज़ों से लगाव है। उन्हें ये भी चिंता रहती है कि देने-लेने से कौन कितना प्रसन्न होगा। अस्थाई और क्षणिक प्रसन्नता के लिए इतना आयोजन-प्रयोजन और परम आनंद के लिए कुछ भी नहीं। किंतु आनंद भी तो इन्हीं रिश्तों से जुड़ा है। जहाँ जा रही है माया, वहाँ दुख-सुख के मायने शायद दूसरे हों। शायद वहाँ दुख-सुख हों ही नहीं। पिछले साल ऋषिकेश में वह दीपक चोपड़ा

से मिली थी। आनंदा में वह अपने पच्चीस अनुयायियों के साथ ठहरे हुए थे। मृत्यु के विषय पर उनका एक व्याख्यान सुनकर माया को लगा कि जीवन-मृत्यु जैसे पेचीदा विषयों को समझना कितना सरल था। 'फूल खिलते हैं, मुरझा जाते हैं और फिर खिलते हैं। इस पृथ्वी पर जो भी जन्म लेता है, उसकी मृत्यु अवश्यंभावी है, पर उसका पुनर्जन्म भी उतना निश्चित है।' माया बस यही नहीं समझ पाती है कि ऋषि मुनियों की बातें उसके मस्तिष्क में टिक क्यों नहीं पातीं। क्योंकि शायद ये संसार है और यहाँ की हर चीज़ क्षणिक है, क्षणभंगुर है। किंतु प्रश्न ये उठता है कि मृत्यु और पुनर्जन्म के बीच के समय में क्या होता होगा।

मृत्यु के उपरांत क्या होगा, इसका भय शायद दूसरों को अधिक होता हो। तभी तो इस वक्त माया को स्वयं कोई भय नहीं। जबकि पिछले दस बारह वर्षों में वह जब-तब यही सोचती रही थी कि मृत्यु के बाद क्या होता होगा और ये भी कि क्या बेहतर है, मृतक को जलाना, ज़मीन के नीचे दबाना या चीलों को खिलाना। आबादी बढ़ती जा रही है, इतने सारे मृतकों को पृथ्वी कैसे और कब तक अपने में जज़्ब कर पाएगी। स्वयं वह जलाने की पक्षधर रही है। चीलों द्वारा नोच खसोट मृतक का अपमान नहीं तो और क्या है। किंतु इस जाति की भावना तो देखिए, शायद ये ही लोग अंततोगत्वा 'परम पिता परमात्मा' में समा जाते हों। 'परम पिता परमात्मा' से उसे याद आई अपने पिता की जो सारा जीवन राम नाम की माला जपते रहे। हालाँकि उनके क्रोध, आत्मरतिक, और मांसाहारी प्रवृत्ति से परेशान उनका परिवार सदा यही सोचता रहा कि केवल 'परम पिता परमात्मा' ही उनकी रक्षा कर सकते थे और शायद उन्होने रक्षा की भी। नहीं तो ऐसी अच्छी मौत किसे नसीब होती है।

माया के पति हरीश की मृत्यु हुए पाँच वर्ष होने को आए। उन्हें दफ़्तर में दिल का दौरा पड़ा और एम्बुलैंस के आने से पहले ही उन्होंने दम तोड़ दिया। उनके शव को घंटो निहारती बैठी रही थी माया कि अब साँस आई कि तब। नर्सों के विश्वास दिलाने के बावजूद कि हरीश अब नहीं रहे, उसे लगता रहा कि उनके शरीर में उसने हरक़त देखी। विवाहित जीवन के दौरान वे कभी अलग नहीं रहे। पढ़ाई, इम्तहान या दफ़्तर के सिलसिले में जब भी हरीश को कहीं जाना पड़ा, वह माया को अपने खर्चे पर साथ लेकर गए। वह स्तब्ध थी कि बिना कुछ कहे वह उसे अकेले कैसे छोड़ के चले गए। अब क्या बचा था, केवल चौखट, दरवाज़े, दीवारें और इन सबसे सिर मारती माया। अरुण और उषा तो पहले ही अलग घर बसा चुके थे। अठारह वर्ष की आयु में विवाह करके महक अपने पति, पीटर, के साथ स्काटलैंड में जा बसी थी और वरुण बर्मिंघम में पढ़ रहा था।

आस पड़ौस में भी किसी को विश्वास नहीं हो रहा था कि हरीश यों चल बसेंगे। संबंधियों और पड़ौसियों ने मिल कर बारी लगा रखी थी। कोई न कोई हमेशा घर में बना रहता कि न जाने माया को कब और क्या आवश्यकता आन पड़े। हफ़्तों तक परिवार के लिए ही नहीं, अपितु मेहमानों के लिए भी नियमित खाना-पीना आता रहा, भजनों के नए-नए सीडीज़ और कैसेट्स बजते रहे, दिये में घी डाला जाता रहा। एक सप्ताह के अंदर ही माया ने अपने दुख पर पूरी तरह काबू पा लिया था और घर परिवार अब उसके पूरे नियंत्रण में था।

नए काले क्रिस्प सूटों में बेटों, दामाद और पोते को देख माया फूली नहीं समा रही थी। विवाह की पच्चीसवीं वर्षगाँठ पर हरीश ने उसे हीरे के छोटे-छोटे बुंदें और नेकलेस दिए थे, जो बहुओं द्वारा पहनाई उस महँगी सफ़ेद साड़ी के साथ कुछ अधिक ही चमक रहे थे। बहुएँ स्वयं लिपटी थीं काली साड़ियों में जिस पर चाँदी के धागों का हल्का बॉर्डर था। माया ने ही कहा था कि चाहे कितना भी बुरा अवसर क्यों न हो, सुहागने काला कपड़ा नहीं पहनती।

घर में अवलोकनार्थ रखे हरीश के शव को देख महक का बेटा आर्यन बार-बार 'हेलो दादू' 'हेलो दादू' पुकारे जा रहा था। आर्यन की हरीश से खूब छनती थी। उनसे मिलने वह महीने में एक या दो बार लंदन से सेंट एंड्रूज़ जाते थे। जब कभी आर्यन शरारत करता, वह उससे कुट्टी कर लिया करते और जहाँ उसने गाल फुलाए कि हुई दादु की अब्बा। 'वाऐ इज़ दादु नॉट टॉकिंग टु मी।' उसकी आँखों में आँसू थे। 'ममा, टैल दादु आई एम नॉट नौटी एनी मोर।' माया कुछ न कह सकी। उसे गोदी में ले पीटर बाहर चला गया।

हरीश के फूलों को गंगा में विसर्जन करने के लिऐ पूरा परिवार हरिद्वार पहुँचा था। माया का भारी भरकम भाई पारस यदि उन सबको नहीं बचाता तो पंडितों की धक्का-मुक्की में घिरे इस परिवार का राम नाम सत्य हो जाता। वरुण और विधि तो पहली बार भारत आऐ थे। उनकी `एक्सक्यूज़ मी, एक्सक्यूज़ मी' भी किसी काम नहीं आई थी। माया ने सोचा कि हरीश की मृत्यु यदि भारत में होती और उनका क्रियाकर्म यहाँ करना पड़ता तो बच्चों के सब्र का बाँध तो अवश्य टूट जाता। अरुण को यदि पिता का कपाल फोड़ना पड़ता तो न जाने क्या होता।

शायद समय आ गया था माया का वापस संसार में लिप्त हो जाने का कि एक दिन उसकी पड़ोसन, जयश्री उसे ज़िद कर अपने साथ घसीट कर ले गई। ऐरे-ग़ैरे नत्थू ख़ैरे सभी बाबाओं के सतसंगों में जाती है जयश्री। माया को इन बाबाओं और माताओं पर कोई श्रद्धा नहीं किंतु इस बार वह जयश्री को टाल नहीं पाईं। एक बड़े नामी योगी लंदन आए हुए थे। भीड़ में बैठी हुई माया को इंगित करके जब बाबा ने पूछा, 'बेटी किसके शोक में डूबी है।' माया ने सोचा कि बाबा को उसकी रोती-धोती शक्ल से ही पता लग गया होगा कि यह नमूना कुछ ज़्यादा ही दुखी है, इसमें कौन-सी बड़ी बात थी। शायद माया के विधवा होने की बात उन्हें जयश्री ने बताई हो। ख़ैर, जब बाबा मन की बात जानते हैं तो वह माया का कष्ट भी जान ही गए होंगे। जयश्री उसे पकड़ कर बाबा के ठीक आगे ले गई, 'बाबा, इसका हज़बेंड ऑफ़ थेई गया छे, कोई नई साथे वात करती न थी अने कोई ने मलती न थी।' जयश्री के हज़बेंड ऑफ़ थेई गया छे, पर माया को हँसी आ गई और बाबा भी मुस्करा पड़े और जयश्री प्रसन्न थी कि माया के कारण, उसे बाबा के नज़दीक जाने की मौका मिल गया था।

'अपनी हानि को तो बेटी सभी रोते हैं, कभी उनकी भी सोचो जो प्रभु के पास हैं, उनके लाभ में भी तुम्हें प्रसन्न होना चाहिए।' माया को लगा कि सचमुच वह कितनी स्वार्थी थी कि उसने हरीश के विषय में तो कभी सोचा ही नहीं। जब तक बाबा लंदन में रुके, माया नियमित रूप से उनके पास योगासन सीखने जाती रही। किंतु उसके बाद न तो बाबा ने कुछ कहा, न ही माया ने कुछ पूछा। उसके दिल में एक सुकून व्याप्त हो गया था जैसे हरीश फिर उसके साथ थे।

शादी की हर वर्षगाँठ पर हरीश मोगरे के फूलों के हार और गजरे माया के लिए विशेष तौर पर बनवाते थे। माया ने सोचा कि यदि हरीश जीवित होते तो उसकी शव पेटिका को मोगरे के फूलों से लाद देते। सगे संबंधी गुलदस्ते लेकर आएँगे। नहीं होंगे तो बस उनके भिजवाए मोगरे के फूल। कितनी अधूरी और फीकी लगेगी माया की शवयात्रा। शायद हरीश उसकी इंतज़ार में हों। वह हुलस उठी। पर क्या करे। कोई हलक़ में उँगली डाल कर तो आत्महत्या नहीं कर लेता। कर भी ले तो जो थोड़ा बहुत उनसे मिलने का मौका है, माया कहीं वो भी न गँवा दे। हालाँकि हरीश स्वयं एक जाने-माने वकील थे, वह उसे 'मी लॉर्ड' कहकर पुकारते थे क्योंकि बाल की खाल उतारने की आदी थी माया। हरीश की याद उसे कभी-कभी दीवाना बना देती है। दिल है कि सँभलता ही नहीं, 'याद आए वो यों जैसे, दुखती पाँव बिवाई जी. . .।'

माँ बचपन में माया को हरिश्चंद्र तारामती के अमर प्रेम की कहानी सुनाती थी। वही तारामती जो अपने पति को यमराज से भी छुड़ा लाई थी। माया ने हाल ही में बी.बी.सी. पर एक फ़िल्म देखी थी जो एक ऐसी बीमारी के विषय में थी जिसमें रोगी बिल्कुल मृत दिखाई पड़ता है। डॉक्टरों को भी उसमें जीवन का कोई लक्षण नहीं दिखाई देता और जीते-जी उसे मुर्दाघर में डाल जाता है। एक ऐसी ही महिला अब सोने से भी डरती है कि कहीं फिर न उसे मृत समझ के मुर्दाघर में डाल दिया जाए। माया को लगा कि सत्यवान के साथ भी कुछ ऐसा ही घटा होगा। तारामती को पूर्ण विश्वास होगा तभी तो वह पति के शव को गोदी में लेकर बैठी रही। जो भी हो, माया का प्रेम अमर है और हरीश आज भी उसके साथ हैं। इस विचार मात्र से वह सिहर उठी। मृत्यु के पश्चात वह उनसे अवश्य मिलेगी। वह इंतज़ार कर रहे हैं उसका उस पार। 'याद आए वो यों जैसे, दुखती पाँव बिवाई जी. . .।'

भाव विह्वल माया ने अंत्येष्टि निदेशक को पत्र लिखकर उसे मोगरे के फूलों के छल्ले पर 'स्वागतम माया, सस्नेह हरीश' लिखवाने की व्यवस्था करने को कह दिया। यह बात भला वह किससे कहती, कहती तो लोग समझते कि उसका सिर फिर गया है। कोई मृत व्यक्ति भी फूल भिजवाता है किसी को? पर कितना मज़ा आएगा जब लोग मोगरे के फूलों के साथ हरीश का नाम देखेंगे, अंतिम बार दोनों का नाम एक साथ। वह रोमांचित हो उठी और ये सोच कर कि 'वैन इन रोम, बी रोमन्ज़' उसने एक मरसेडीज़ भी बुक करवा दी। विदेशों में विवाह के अवसर पर अथवा शवयात्रा में काली रॉल्सरौयज़ बुलवाना पौश समझा जाता है। हरीश होते तो मरसेडीज़ों की क़तार खड़ी होती। माया की अर्थी भी शान से उठनी चाहिए। बच्चों को भी अच्छा लगेगा। काली लंबी रॉल्सरौयज पर मोगरे के फूल कितने भव्य दिखेंगे। गली कूचों में लोग ठिठक के रुक जाएँगे और सराहेंगे इस शवयात्रा को।

मृत्यु का भय नहीं सता रहा माया को। जो होना है, सो तो होकर ही रहेगा। नरक, स्वर्ग, पुनर्जन्म या 'कुछ नहीं'। 'कुछ नहीं' के साँप को तो वह मन में ही दबाती रहती है और शायद उनकी अपनी बीन पर ही, फन उठाए यह भय जब-तब लहराने लगता है। लोगों को उसने कहते सुना है कि कहीं आत्मा खालीपन में भटकती न रहे। भला ये भी कोई बात हुई। देवग्रंथों के अनुसार आत्मा को न तो कोई मार सकता है, न ही कोई दुख पहुँचा सकता है। तो फिर काहे का डर। डर तो बस माया को है पुनर्जन्म से, वही पढ़ाई लिखाई, विवाह, बच्चे, और फिर से मृत्यु। पर क्या पता उसे अगली योनि मनुष्य की मिले या न मिले। जिस रूप में भी पैदा हो बस भगवान मनुष्य जन्म की याद भुला दें। क्या जाने कीड़े मकौड़े और जानवरों को याद रहता हो अपना पिछला जन्म। शायद इसी का नाम नरक हो, कर्मों का फल। माया को लगता है कि उन्हें अपने पिछले जन्म की कुछ-कुछ याद है। वैसे तो मनुष्य का मस्तिष्क न जाने क्या-क्या खेल दिखाता है किंतु यदि यह बात सच है तो दो बार वह मनुष्य योनि में जन्म ले चुकी है और अब मनुष्य योनि का संयोग कम ही है। ख़ैर, जो भी होगा, देखा जाएगा, अभी से परेशान होने का क्या फ़ायदा। इस आख़िरी वक्त में भजन गाने से तो भगवान प्रसन्न होने से रहे। तैयारी भी करे तो क्या और कैसी?

जब भी माया किसी यात्रा पर निकलती है, ढेर-सी तैयारी करके चलती है। हर तरह की बीमारी की दवाएँ, गरम पानी की बोतलें, डिब्बे का खाना, अचार मुरब्बे, माचिस, चाकू, स्क्रू ड्राइवर, असमय की ठंड के लिए गरम कपड़े, कंबल, ब्रांडी, अतिरिक्त पेट्रोल का कनस्तर और न जाने क्या-क्या। जब वह लौटती है सारे सामान के साथ लदी-फदी, तो बच्चे हँसते हैं, 'डिडंट वी टैल यू टु ट्रैवल लाइट।' पर किसी चीज़ की ज़रूरत पड़ जाती तो माया को किसी का मुँह तो नहीं ताकना पड़ता। अब चाहे अंगारों पर चलना पड़े या बर्फ़ पर, इस यात्रा पर उसे खाली हाथ ही निकलना है। काश कि उसने 'ट्रैवल लाइट' की आदत डाल ली होती तो आज उसे इस बेचैनी से दो चार न होना पड़ता।

समय की पाबंद, माया बिल्कुल तैयार बैठी है। जैसे बस और इंतज़ार नहीं कर पाएगी। क्यों कर लोग समय का पालन नहीं करते। पर मृत्यु को दोष नहीं दिया जा सकता और न ही डॉक्टरों को। कोई समय तो तय नहीं किया गया था। पहली बार उसके दिमाग़ में ये बात आई कि डाक्टर ग़लत भी तो हो सकता है। थोड़ी-सी आशा बँधी किंतु जीवन की नन्ही-सी किरण भी उसे अधिक उत्तेजित न कर पाई। डाक्टर ने कह दिया, माया ने सुन लिया और चुपचाप चली आई। एक प्रश्न तक नहीं पूछा। डाक्टर ने उससे कोई सहानुभूति भी नहीं प्रकट की। यहाँ तो टर्मनली इल रोगियों को विशेष परामर्श की सुविधा दी जाती है। एक ज़माना था जब रोगियों को बुरे समाचार से वंचित रखा जाता था किंतु अब तो विशेषज्ञों का मत है कि रोगी और उसके संबंधियों को सीधे-सीधे बता देना उचित है।

काश कि माया बिजली के बटन की तरह जीवन का स्विच खट से बंद कर पाती क्योंकि वह सचमुच तैयार है शरीर त्यागने को। बेकार बैठी है और उसकी ऊर्जा व्यर्थ जा रही है। शायद उसे इसकी आवश्यकता पड़े मृत्यु के उपरांत। पर उसके बस में कुछ नहीं है। मनुष्य के बस में कुछ भी नहीं है। माया सोचती है कि आँधी तूफ़ान और भूचाल आदि के माध्यम से प्रकृति जब-तब अपने प्राणियों की संख्या नियंत्रित करती रहती है, जिसे भगवान का कोप समझ कर झेलते रहते हैं पृथ्वीवासी। जो समझ से परे हो, उसे भगवान का नाम दें या किसी बुद्धिमान अभिकल्पक का, क्योंकि जगत की संरचना के पीछे एक प्रतिशत संदेह तो बना ही हुआ है। इसी विषय को लेकर अमेरिका जैसे विकासशील देश में आज भी लोगों के बीच छुट-पुट घटनाएँ सुनने में आती हैं, जिनमें कोई डार्विन के विकासवादी सिद्धांत को कोसता है तो कोई विज्ञान को। माया के पल्ले जब कुछ नहीं पड़ता तो वह गाने लगती है, 'कोई तो बता दे जल नीर कि सिया प्यासी है।' ये प्यास जीते जी तो बुझने से रही। शायद मर के ही मिलना हो उस बुद्धिमान अभिकल्पक से। किसी से मिलेगी अवश्य माया और हरीश का पता ठिकाना भी मालूम करके रहेगी।

श्राद्धों में माया की दादी स्वर्गीय दादा और परिवार के अन्य मृतकों की शांति के लिए पंडितो को दान देतीं और भोजन कराती थीं। पिता की बात याद कर माया अनायास मुस्करा उठी। जब भी माँ श्राद्ध के भोजन का प्रबंध करतीं, वह कहते कि उनके पिता और दादा की आत्मा को शांति पहुँचानी है तो कोफ़्ते पकाओ, मुर्ग मुसल्लम बनवाओ। पति की मृत्यु के उपरांत, माँ, जो अपनी सास को दकियानूसी करार देतीं आई थीं, स्वयं अंधविद्यालयों में कंबल और भोजन आदि बाँटने लगीं ये कहकर कि उनकी आत्मा को शांति मिले न मिले, किसी गरीब का कल्याण तो हो ही जाएगा। जब शरीर ही नहीं रहा तो कैसी शांति और कैसा क्लांत, पर वही बात कि दिल को समझाने को गालिब ख़याल अच्छा है। हालाँकि पंडितों को जजमानों की क्या कमी, बहुत से बेवक़ूफ़ हैं दुनिया में, यहाँ लंदन में भी। हरीश की प्रत्येक बरसी पर माया स्वयं पूजा करवाती है, अंधविद्यालयों और अन्य संस्थाओं को दान देती है। जहाँ तक हरीश का प्रश्न है, वह कोई ख़तरा नहीं उठाना चाहती। क्या पता किस दान से और क्योंकर पति को चैन मिल जाए। अगर ये सब करने से कोई फ़र्क नहीं पड़ता, तो भी पैसा किसी अच्छे काम में ही तो लगा। पूजा पाठ एवं दान करने का शायद यही औचित्य हो।

बनारस से लाई हुई गंगाजल की बोतल को माया ने अपने सिरहाने रख लिया है। डायरी में उसने झटपट एक और टिप्पणी जोड़ दी कि यदि किसी कारणवश वह स्वयं गंगाजल नहीं पी पाए तो जो भी उसे मरणोपरांत देखे, उसके मुँह में गंगाजल की कुछ बूँदे टपका दे। और हाँ ये भी कि उसकी अस्थियाँ गंगा की बजाय रिवर थेम्स में भी डाली जा सकतीं हैं। एक कहावत है कि मन चंगा तो कठौती में गंगा। फिर भी, अंदर या बाहर, गंगा तो उसके संग होगी ही।

बरसों पहले किसी वैज्ञानिक ने विष का स्वाद जानने के लिए अपने ऊपर एक प्रयोग किया था। जीभ पर ज़हर रखते ही वह मर गया और उसका प्रयोग सफ़ल नहीं हो पाया। माया ने सोचा कि यदि सभी मरणासन्न लोग कोई एक प्रयोग करके मरें, तो शायद कई गुत्थियाँ सुलझ जाएँ। जैसे कि वह जानना चाहती है कि मरते समय व्यक्ति को कैसा अनुभव होता है। शांति का या अशांति का। उसने निर्णय लिया कि वह अपनी तर्जनी पर लाल रंग यानि अशांति और बीच की उँगली पर हरा रंग यानी कि शांति का रंग लगा के इंतज़ार करेगी मरने का। पलंग पर एक नोट लिख कर छोड़ जाएगी बच्चों के लिए कि चादर पर जो भी रंग रगड़ा हुआ मिले, उसके प्रयोग का निष्कर्ष वही होगा। मन में ढेरों दुविधाएँ उठीं किंतु माया ने उन्हें एक ही वार में दबा दिया कि प्रयत्न करने में क्या जाता है। इस विषय पर शायद उसे किसी की सहायता की आवश्यकता पड़े। पारस होता तो वे दोनों बैठकर इस प्रयोग की बारीकियों में उतरते किंतु इस बारे में सोच कर माया और समय व्यर्थ नहीं करना चाहती।

माया की नज़र फिर पर्दों पर जा ठहरी। घर के धुले पर्दों में मज़ा नहीं आता। ड्राईक्लीनर्स के धुले और भारी इस्त्री किए पर्दे गंदे भी कम होते हैं। ममता इस शनिवार को आए कि न आए। पिछले हफ्ते ही वह बता रही थी कि नारायण ने जब गिरोह के सरदार से माँ के पास जाने की अनुमति माँगी तो उसने न केवल साफ़ मना कर दिया, परंतु उसे जान से मार देने की धमकी भी दे डाली। माया ने सोचा कि शाम को फ़ोन करके ममता को बुला लेगी और पैसे देकर कहेगी कि जाके अपने बेटे को छुड़ा ले। कितनी खुश हो जाएगी ममता। अपने इस निर्णय पर माया सचमुच बेहद प्रसन्न थी।

माया पर्दे उतारने को अभी स्टूल पर चढ़ी ही थी कि घंटी बजी। इस समय कौन हो सकता है उसने तो किसी को बुलाया नहीं था। कहीं वह किसी को बुलाकर भूल न गईं हो। दरवाज़ा खोला तो देखा बाहर ममता खड़ी थी। 'तू हज़ार बरस जिएगी ममता, अभी मैं तुझे ही याद कर रही थी।' वह चहकती हुई बोली।

'मैडम जी, वो नारायण है न, वो. . .' बदहवासी में वह ठीक से बोल भी नहीं पा रही थी।

'हाँ हाँ, क्या हुआ उसे।'

'उसका एक्सीडेंट,' माया यदि उसे सँभाल न लेती तो ममता वहीं ढेर हो जाती। आँसू थे कि रुकने का नाम ही नहीं ले रहे थे और हिचकियों के मारे उसका बोलना मुहाल था। उसके आधे अधूरे वाक्यों से माया इस नतीजे पर पहुँची कि नारायण के साथ हुए इस हादसे के पीछे उन गुंडों का ही हाथ है। कहीं से उन्हें पता चल गया था कि वह चुपचाप लंदन जा रहा है कि बस, उन्होंने उसे कार के नीचे कुचलने की कोशिश की और फिर अस्पताल में आकर उसे धमकी दी कि इस बार तो टाँगे ही तोड़ी हैं, अगली बार वे उसे जान से मरवा सकते हैं। माया ने ममता के हाथ से निचुड़ा-पुचड़ा काग़ज़ लिया जिस पर उसके भाई सर्वेश का नंबर लिखा हुआ था। नंबर मिलाया तो सर्वेश ने भी वही सब दोहरा दिया जो ममता बता रही थी, इस अनुरोध के साथ कि, 'मैडम, आप तो जी बस बहन को प्लेन में बैठा दें, नारायण की हालत ठीक नहीं है मैडम जी।' वह भी बहुत घबराया हुआ लग रहा था जैसे कि उसकी अपनी जान पर बनी हो। भाई से बात करके तो ममता के सब्र का बाँध मानो टूट ही गया।

'अब मैं जी कर क्या करूँगी, मैडम, मैं उसी के तो लिए इकट्ठा कर रही थी पैसा। इससे तो मैं उसके साथ ही जीती मरती, अब इस पैसे क्या फ़ायदा', कहकर उसने अपनी सारी जमा पूँजी माया के कदमों में डाल दी। माया ने उसे सीने से लगा के तसल्ली देनी चाही किंतु वह तो यों रोए चली जा रही थी जैसे दुनिया में उसका कुछ न बचा हो। माया ने झटपट अपने ट्रैवल एजेंट को फ़ोन किया और जब वह ममता के लिए टिकट आरक्षित करवा रही थी तो उसने सोचा क्यों न उसके साथ वह स्वयं भी पटना चली जाए। पटना जैसी जगह में किसी को पटाना होगा, किसी से पटना होगा, किसी को मनाना होगा तो किसी को हटाना होगा। ममता अभी इस हालत में नहीं है कि नारायण की कोई मदद कर

सके। कहीं इन गुंडों के चक्कर में आकर वह न केवल अपना मेहनत से कमाया सारा धन ही न गँवा दे, बल्कि अपनी जान से भी हाथ धो बैठे। ऐसे समय में धैर्य, नियंत्रण और कूटनीति से काम लेना होगा। सीधी सादी ममता को तो शायद इन शब्दों का अर्थ भी नहीं पता होगा।

ममता ने जब सुना कि मैडम उसके साथ पटना चल रही हैं तो उसके चेहरे पर आश्चर्य, कुतूहल और अनुग्रह के भावों की छटा बस देखते ही बनती थी। स्पष्टत: माया के दिमाग़ में एक योजना बन रही थी। ममता को रसोई में व्यस्त करके वह स्वयं कंप्यूटर खोल कर बैठ गई। उसने वेबसाइट्स पर एक पाँच सितारा होटल में दो कमरे, एक बड़ी जीप और ड्राईवर का इंतज़ाम कर लिया। फ़ोन पर पारस को उसने एक अच्छे वकील और सुरक्षा संबंधित प्रहरियों का प्रबंध करने की हिदायत भी दे दी, जो इन्हें एअरपोर्ट पर उतरते ही मिल जाएँ ताकि बिना समय गँवाए रास्ते में ही बात की जा सके। माया ने सोचा कि अच्छा हुआ कि बच्चे यहाँ नहीं हैं। वे उसे कभी ये जोखिम नहीं उठाने देते। पारस को भी रहस्यपूर्ण कारनामों में दिलचस्पी है इसीलिए उसने अधिक चूँ-चपड़ नहीं की। पटना के नाम पर वह हिचका अवश्य था किंतु जब माया ने कहा, 'मैं पटना जा ही रही हूँ, कोई प्रश्न नहीं पूछना।' उसके पास कोई चारा नहीं था सिवाय माया के कथानुसार प्रबंध करने के। वह बोला, 'ठीक है मैं भी पटना आ रहा हूँ और तुम भी अब कोई प्रश्न नहीं पूछना।'

माया चिंतित थी कि दो महिलाएँ गुंडों के गिरोह का सामना कैसे कर पाएँगी। किंतु पारस के आ मिलने से वह आश्वस्त हो गई। बचपन में इस जोड़ी ने परिवार की नाक में दम कर रखा था। एक बार दोनों ने आटा फ़र्श पर बिछा कर पाँव के निशान से चोर पकड़ के माँ के सम्मुख खड़ा कर दिया था। हाँ, यह अलग बात थी कि माँ को पता था कि चोर घर का नौकर ही था, जो रात को छिप-छिप कर मिठाई खाता था और शक इन दोनों पर किया जाता था।

'शर्लौक होम्स', 'मर्डर शी रोट' और 'कोलंबा' जैसे रहस्यपूर्ण टी.वी. धारावाहिकों की दीवानी माया को जीवन में पहली बार जोखिम उठाने का मौका मिला है, जिसे वह आसानी से नहीं गँवाने वाली। कहाँ वह मृत्यु से उबर नहीं पा रही थी और कहाँ अब उसे कुछ याद न था सिवाय इसके कि नारायण को कैसे बचाया जा सकता है। पटना और पटना के गुंडों से निडर वह सुबह की फ़्लाइट का इंतज़ार कर रही है, ममता से अधिक बेचैनी उसे है। सख्त पहरे में वह नारायण को दिल्ली ले जाएगी और जब वह ठीक हो जाएगा तो पारस की फैक्टरी में ही कोई काम पर लग जाएगा।

कहाँ ममता आत्महत्या करने की सोच रही थी और कहाँ अब उसे विश्वास हो चला था कि नारायण की बाल मज़दूरी के दिन अब पूरे हो गए थे। कर्मठ ममता को काम की भला क्या कमी। वैसे भी जब तक माया जीवित है, तब तक तो ममता उसके साथ रहेगी।

तीन दिन में मृत्यु वाला सपना इतना सजीव था कि माया अपनी मृत्यु के लिए पूरी तरह तैयार थी। किंतु इस वास्तविक घटना ने उसे पूरी तरह जिला दिया था। वह कितनी भाग्यशाली है कि जीवन के उद्देश्य के साथ-साथ, उसे दिशा भी मिल गई। उसके शरीर का रोम-रोम स्पंदित है और अंग-प्रत्यंग फड़क रहा है। उसे लगा कि इतनी ज़िंदा तो वह जीवन में पहले कभी नहीं रही।

कुछ भूत हो रहा है....

वृषभ प्रसाद जैन

कुछ भूत हो रहा है
कुछ वर्तमान
पर अब भी कुछ भविष्य के लिए रह जा रहा है
मेरे मित्र ! यही तो काल है
और ऐसे ही वर्ष दर वर्ष का होते रहना है
इसी कारण से तो 'होने' का होते रहना काल का होना है
और काल 'होना' क्रिया-रूप भी
अरे देखो! १६ भूत हो रहा और १७ वर्तमान
और पता नहीं-- कितनों को और अभी होना है

इसीलिए कुछ आप्त जनों ने कहा--
काल समय-रत्नों की ढेरी है
जिसने समय-रत्न सँजोये,
उनके लिए काल सिद्ध होता रत्न है
जिसने इन्हें लुट जाने दिया,
उनके लिए काल बस विकराल काल
वे काल के लिए निरर्थक, काल उनके लिए निरर्थक

हमारी भारतीय भाषाएँ प्रतिदिन मर रही हैं
उनके शब्द-कोष लुट रहे हैं
क्योंकि हर दिन हमारे शब्द-रत्न और प्रयोग-रत्न भी
हाशिए पर जा रहे हैं

अब घड़ी आ गयी है कि हम आँकें--
हमने वर्ष १६ में कितने रत्न बटोरे
और
कितने लुट जाने दिए

चलो, लुट गए, तो लुट गए
बटोर लिए तो बटोर लिए
अब कामना है कि वर्ष १७ में
आपके पास जरूर इकट्ठे हों
सुख के रत्न
अभिनव रचनाओं के रत्न
ऐसी आकृतियों वाले रत्न
जैसी पहले कभी गढ़ी नहीं गयीं----
और लुटने से बचें
हमारी भारतीय भाषाओं के शब्द-रत्न भी
जो पीढ़ी दर पीढ़ी
हमारे पुरखों ने सम्हाल कर रखे थे -----
क्यों सम्हालेंगे न हम अपना अपना खजाना !

ये संकल्प करें तो चमत्कार हो जाए

डॉ. वेदप्रताप वैदिक

नए साल पर आम तौर से लोग दूसरे को बधाइयाँ देते हैं और शुभकामनाएँ करते हैं। पत्रकार, विशेषज्ञ, नेतागण और आम लोग भी अपनी सरकारों से कई आशाएँ और अपेक्षाएँ करते हैं। यह एक ढर्रा बन गया है लेकिन क्या इस मौके पर हर आदमी कोई शुभ-संकल्प करता है? क्या हम २०१६ के मुकाबले २०१७ को एक बेहतर साल बनाने के लिए कमर कसेंगे? क्या हम ऐसी प्रतिज्ञा करेंगे कि इस नए साल में हम ये-ये काम करेंगे और ये-ये काम नहीं करेंगे? तो आइए, सरकारों से उम्मीद हम बाद में करेंगे, पहले हम २०१७ में जो खुद कर सकते हैं, वे संकल्प लें।

सबसे पहला संकल्प यही करेंगे कि न तो हम रिश्वत देंगे और न ही लेंगे। यह अत्यंत कठिन संकल्प है। प्रायः रिश्वत तभी दी जाती है, जब हम कोई गलत काम करवाना चाहते हैं। तो संकल्प यह भी करें कि थोड़ा नुकसान भुगत लें लेकिन किसी से भी कोई नियम-विरुद्ध काम न करवाएँ। यदि किसी नियमपूर्ण काम के लिए भी रिश्वत माँगी जाए तो उसके विरुद्ध लड़ें। पत्रकार-जगत को सचेत करें। यदि किसी बेहद नाजुक मसले पर रिश्वत देनी ही पड़ जाए तो उसका कसकर भांडाफोड़ करें। यदि सिर्फ दस करोड़ लोग ही यह संकल्प कर लें तो देश में से ९० प्रतिशत भ्रष्टाचार अपने आप खत्म हो जाएगा। जहाँ तक मुझे याद पड़ता है, मैंने अपने जीवन के ७२ वर्षों में कभी एक पैसा भी रिश्वत में नहीं दिया और जीवन बड़े मजे से चल रहा है। दूसरा, संकल्प हम यह क्यों न करें कि अपने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन में हम जाति और संप्रदाय को हावी नहीं होने देंगे? शुद्ध व्यक्तिगत जीवन में हम अपने विश्वासों के अनुसार जरुर जिएँ लेकिन अपनी सामूहिक पहचान के नाम पर देश में भेड़-बकरीवाद नहीं चलाएँगे। जाति और संप्रदाय को हथियार बनाकर वोट माँगने, नौकरियाँ पटाने और लोगों में ऊँच-नीच फैलाने का काम हम बिल्कुल नहीं करेंगे। तीसरा, संकल्प यह कि अपना सारा कामकाज यथासंभव स्वभाषा में करेंगे। विदेशी भाषाएँ स्वेच्छा से पढ़ना-पढ़ाना अति उत्तम हैं लेकिन उनको शिक्षा, चिकित्सा, न्याय और राज-काज में अनिवार्य बनाए रखना राष्ट्रद्रोह से कम नहीं है। दुनिया के किसी भी शक्तिशाली और संपन्न राष्ट्र में कोई विदेशी भाषा थोपी नहीं जाती। अँग्रेजी की इस गुलामी से मुक्ति पाना कठिन है। इसलिए इसकी शुरुआत अपने दस्तखत से करें। आज ही संकल्प करें कि हम अपने दस्तखत अँग्रेजी से बदलकर हिंदी या स्वभाषा में करेंगे। दुनिया का कोई कानून आपको रोक नहीं सकता। आज तक मैंने देश या विदेश में एक बार भी अपने दस्तखत अँग्रेजी में नहीं किए हैं। मुझे कभी कोई कठिनाई नहीं हुई तो आपको क्यों होगी? चौथा, सर्वोच्च न्यायालय ने महाराष्ट्र में शराबबंदी को उचित ठहराया है। मेरा निवेदन है कि यदि करोड़ों भारतीय आज यह संकल्प करें कि वे खुद को हर तरह के नशे से मुक्त रखेंगे तो संपूर्ण देश का स्वास्थ्य सुधरेगा, पैसा बचेगा, कार्यक्षमता बढ़ेगी, परिवार में शांति रहेगी। पाँचवा, यथासंभव हम मांसाहार नहीं करेंगे। यह संकल्प इसलिए जरुरी है कि इससे जीव-दया, स्वास्थ्य और आर्थिक बचत में वृद्धि होती है। दुनिया के किसी भी धर्म में मांसाहार को अनिवार्य नहीं बताया गया है। यदि कोई मांस न खाए तो वह किसी धर्म का उल्लंघन करेगा, ऐसा कहीं नहीं लिखा है। अमेरिका, यूरोप और चीन जैसे देशों में लाखों लोग शुद्ध शाकाहारी बनते जा रहे हैं। अनेक इस्लामी देशों में मेरे विद्वान मित्र शाकाहारी हो गए हैं तो आप क्यों नहीं हो सकते? छठा, देश के अरबों रु. दवाइयों और अस्पतालों में खर्च हो रहे हैं। यदि अपने देशवासी यह संकल्प लें कि वे प्रतिदिन किसी भी प्रकार का व्यायाम अवश्य करेंगे और सात्विक भोजन पर जोर देंगे तो सारे देश की

कार्यक्षमता दुगुनी हो जाएगी। प्रसन्नता भी बढ़ेगी। शास्त्रों में कहा भी गया है- 'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्' याने शरीर ही धर्म का पहला साधन है। सातवाँ, संकल्प हम यह ले सकते हैं कि अपने व्यक्तिगत और सार्वजनिक जीवन में कुछ मर्यादाओं का पालन हर कीमत पर करेंगे। हम कुछ लक्ष्मण-रेखाओं को कभी नहीं लाघेंगे। ये लक्ष्मण रेखाएँ चाहे आर्थिक लेन-देन की हों, स्त्री-पुरुष संबंधों की हों, अपने राजनैतिक विरोधियों से व्यवहार की हों। यदि हमारे सांसदों ने इस तरह का संकल्प लिया होता तो क्या २०१५ की संसद क्या इतनी बाँझ सिद्ध होती? क्या इतने महत्वपूर्ण विधेयक अधर में लटके रहते? इसी प्रकार हमारा पत्रकारिता जगत यदि मर्यादाओं का ध्यान रखता तो अपने देश में क्या असहनशीलता का नकली वातावरण खड़ा हो सकता था? भारत की फिजूल बदनामी क्यों होती? आज पत्रकार—जगत का महत्व हमारे लोकतंत्र में अत्यधिक हो गया है। आज खबरपालिका ही विधानपालिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका का संचालन और नियंत्रण कर रही है। टीवी चैनलों पर हमें तू-तू, मैं-मैं पत्रकारिता से बाज़ आना चाहिए।

देश के करोड़ों लोग उक्त संकल्प कर लें और उन पर अमल करें तो सरकारों का बोझ काफी हद तक हल्का हो जाएगा। सरकारों के असली मालिक कौन हैं? जनता है। आप और हम हैं। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इसी बात को कितने अच्छे ढंग से कहा है। उन्होंने कहा था कि वे जनता के 'प्रधान सेवक' हैं। यदि मोदी प्रधान सेवक हैं तो अन्य नेता क्या हैं, कहने की जरुरत नहीं है। यदि यह कथन सत्य है तो अपनी केंद्र और प्रदेशों की सरकार से हम कुछ बुनियादी कामों की उम्मीद करें तो गलत नहीं होगा।

सबसे पहले सारी सरकारों को अपना ध्यान गरीबी दूर करने पर लगाना चाहिए। देश में गरीबों की संख्या ८०करोड़ से ज्यादा है लेकिन सरकार ने गरीबी की परिभाषा ऐसी कर रखी है कि यह संख्या घटाकर एक-तिहाई कर दी जाती है। क्या २८ रु. गाँवों में और ३२ रु. रोज शहरों में कमानेवाले ही गरीब हैं? जो इससे थोड़ा भी ज्यादा कमाता है, क्या वह अमीर है? क्या २८ और ३० रु. में किसी व्यक्ति के रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा, चिकित्सा और मनोरंजन की व्यवस्था हो सकती है? गरीबी की रेखा कम से कम १०० रु. रोज पर खींची जानी चाहिए। दूसरा, देश के जितने भी चुने हुए प्रतिनिधि हैं याने सांसद, विधायक, पार्षद और पंच अपने बच्चों को सिर्फ सरकारी स्कूलों और कालेजों में ही पढ़ाए। यह नियम समस्त सरकारी अफसरों और कर्मचारियों तथा जजों पर भी लागू हो। इसी आशय का फैसला इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने कुछ दिन पहले देकर मेरे अभिमत का समर्थन किया है। यह नियम यदि सारे देश में लागू किया जाए तो भारत की शिक्षा-व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन हो जाएगा। गैर-सरकारी शिक्षा संस्थानों पर सरकार का नियंत्रण कुछ इस तरह का हो कि उनकी स्वायत्ता तो बनी रहे लेकिन वे लूट-पाट के केंद्र न बनें। तीसरा, यही नियम चिकित्सा के मामले में लागू हो। किसी भी जन-प्रतिनिधि और सरकारी कर्मचारी और उसके परिजन को यदि अपना इलाज़ करवाना हो तो वह सरकारी अस्पतालों में ही करवाए। अपवादस्वरुप यदि कहीं बाहर इलाज़ कराना जरुरी हो तो वह विशेष अनुमति लेकर ही कराया जाए। यदि यह नियम सख्ती से लागू कर दिया जाए तो देश की चिकित्सा व्यवस्था में जबर्दस्त सुधार हो जाएगा और गरीब से गरीब आदमी को भी इलाज से वंचित नहीं रहना पड़ेगा। चौथा, देश के सारे काम-काज से अँग्रेजी की अनिवार्यता खत्म की जाए। अँग्रेजी के माध्यम से किसी भी विषय की पढ़ाई नहीं की जाए। उस पर कानूनी प्रतिबंध हो। संसद में, सरकार में, अदालतों में अँग्रेजी के प्रयोग पर अर्थदंड हो। विदेशी भाषाएँ उन्हीं देशों में चलती हैं, जो कभी गुलाम रहे हैं। सरकारी नौकरियों की भर्ती में अनिवार्यता समाप्त की जाए। पाँचवाँ, सरकारी नौकरियों में दिया जा रहा जातीय आरक्षण खत्म किया जाए। नौकरियाँ सिर्फ योग्यता के आधार पर दी जाएँ। आरक्षण केवल १० वीं कक्षा तक शिक्षा में दिया जाए। वह भी जाति नहीं, जरूरत के आधार पर दिया

जाए। जो भी वंचित, दलित, गरीब हो, उसके बच्चों को भोजन, वस्त्र, निवास और शिक्षा मुफ्त मिले। छठा, हमारे राजनीतिक दलों और नेताओं के आय-व्यय का सारा हिसाब प्रतिवर्ष सार्वजनिक किया जाए। यह नियम समस्त सरकारी अफसरों पर भी लागू किया जाए ताकि भ्रष्टाचार पर कुछ नियंत्रण हो सके। सातवाँ, आयकर की व्यवस्था समाप्त हो और उसके स्थान पर व्यय कर लगाएँ। आमदनी नहीं, खर्च पर रोक लगे। ऐसा करके हमारी सरकार उस भारतीय आदर्श जीवन-व्यवस्था को प्रोत्साहित करेगी, जो 'त्याग के साथ भोग' का आदर्श उपस्थित करती है। यह व्यवस्था भारत को अमेरिकी उपभोक्तावाद की नकल से मुक्त करेगी। हमारी सरकारों के पास मैलिक विचारों का अभाव है। हमारे नेता नौकरशाहों की नौकरी करते हैं। वे विदेशी विचारों को जस का तस निगल लेते हैं। इस व्याधि से बचने की जरुरत है। आठवाँ, हमारी केंद्र सरकार को चाहिए कि वह यूरोपीय संघ की तरह दक्षिण और मध्य एशिया के सभी देशों का एक महासंघ खड़ा करें। यदि हम इस महान योजना को लागू कर सकें तो अगले १० वर्षों में हमारे देशों के बीच न तो युद्ध होंगे, न फौजों पर अंधाधुंध खर्च होगा और न ही कोई गरीब रहेगा। इन देशों में छिपे हुए खनिज पदार्थों के खजाने खुल पड़ेंगे। यह २१ वीं सदी एशिया की सदी बन जाएगी। सुझाव तो कई और भी हैं लेकिन सरकार इन्हें लागू कर दे तो ही चमत्कार हो जाए।

स्वर्गीय पिता ज़रूर पूछते

डॉ. हरजेन्द्र चौधरी

पिता ने कभी कंप्यूटर नहीं देखा था
न ही जलशोधक आर.ओ.
उनके रहते मैंने भी नहीं

आज वह ज़िन्दा होते
बोतलबन्द पानी देखकर उन्हें नदियों-नहरों-तालाबों की याद आती
बहुत ख़ुश होते अपने पोते की कमाई देखकर

खाद-बीज के बारे में पूछना भूलकर
ज़रूर पूछते उससे
तुम्हारी यह अमेरिकन कम्पनी
कुछ भी नहीं बनाती --- न ट्रैक्टर, न जीप, न कोई और मशीन
कुछ भी पैदा नहीं करती --- न अन्न, न भाजी, न फल, न गन्ना, न कपास
सिर्फ़ कंप्यूटर पर उँगलियाँ चलाने वाले
तुम जैसों को इतनी-इतनी तन्ख़ाहें देती है
इसके पास इतना पैसा आख़िर आता कहाँ से है...

? ? ?

जन्तर का मन्तर

अमित राजपूत

भोर झड़ रही है। आसमान पर दूर....वहाँ पीपल के पेड़ के उस पार से झाँकते ललमुँहे सूरज के पीछे-पीछे कुछ चिड़ियों का झुंड इधर ही चला आ रहा है। यहीं पास के बइलहा तारा पर रहने वाली बतख्खें अपनी अजां में लग गयी हैं। हरश्रृंगार के पेड़ जिसकी डालियाँ बइलहा तारा की ओर झुकी हुयी हैं, पर लदे उसके सभी फूलों ने तालाब को अपना समर्पण कर दिया है। इस तालाब के पानी का ये श्रृंगार हर रोज़ होता है। फूलों की सुगन्ध से मदहोश इसके पानी ने रोज़ की तरह आज फ़िर प्रेम के गीत गाने शुरू कर दिये हैं। इस गीत पर बतख्खों की अज़ां मिलने से एक साज़-सा बजने लगा है, जिसे सुनकर सूरज भागा चला आ रहा है जो चुपचाप पोखर में उतर कर चुपचाप बैठ गया है।

अचानक कहीं से पायज़ेब के बजने की आवाज़ आ रही है। इसे सुनकर पोखर में बैठे सूरज में हलचल हुयी और पोखर के बगल में खड़े सरपत(खर-पतवार) के उस पार खेत में बैठे बिजइया में भी। बिजइया तलाय फिर रहा है। उसने उचक कर सरपतों के बीच से देखा तो गाँव की ही रनिया बइलहा तारा में मूंज भिगोने आयी है। मूंज ढेर सारी है।

कुछ ही देर में बिजइया तलाय फिर चुका। वह तारा में शौचना चाहता है। पर, शौचे तो कैसे? तारा के उस पार रनिया खड़ी है।

'रनिया मुई-खानी इत्ती सबेरे-सबेरे हिंया कहाँ उफरे चली आई हय। जानत ही कि मढ़इन के तलाय जाय का टैम हवे। ऊपर से देखो एहिका टरतो नहीं आय।' बिजइया मन ही मन रनिया को कोस रहा था।

रनिया मूंज के ढेरों को तालाब में डालकर वहीं बैठ गयी। उसकी नज़रे तालाब के उस पार हरश्रृंगार के पेड़ को देख रही थीं। वास्तव में वो नज़रें देख क्या रही थीं, कुछ ढूँढ-सा रही थी रनिया हरश्रृंगार के पेड़ में। वो अपनी गर्दन लफा-लफा कर पेड़ से बातें-सी करने को उठती।

उस पेड़ के ठीक सामने बिजइया सरपत की मेंड़ के उस पार खेत पर बैठा था। 'य मोहिका देख लइगेहे का? मगर य उचक-उचक के मोहिका कहे ताड़त ही..? देखले... देखले एहिका!' बिजइया चुपचाप सरपत की आड़ में दुबका जा रहा था और ख़ुद से सवाल करता जाता। रनिया अब अपना सिर पीट रही थी और हाथ से बुलाने का कुछ इशारा भी करने लगी। अब तो बिजइया हैरान था! 'निर्लज्ज लड़की तोरे बाप के उमर का हों मै। य भाई बदनाम करदेई छोकरी। न य हिंया से टरी अ न मैं शउंच पइहों। ससुर शउंचे के चक्कर मा इज्जत गंवा बइठिहों मैं। लाओ ढेलेन से निपट के खसकी हिंयन से, कहे से कि आज-काल की बिटिहिनिन के शरीर मा यूरिया जोरान ही।'

बिजइया जल्दी ही वहाँ से निपट कर खेतों के रास्ते ही गाँव की ओर चला गया। रनिया अभी भी उस हरश्रृंगार के पेड़ की ओर देख रही है। उसने देखा कि सुड्डनवा अब उस पेड़ से उतर कर उसकी ओर आ रहा है।

'हद्द होइगे। ओतनी देर से ताड़ित ही कि जाने कहाँ रहिगें। आंय भी हवें कि नहीं। पेड़ तो हरसिंगारेन का कहेन रहा...। लागत है देखात नहीं आय कि दिन निकरियावा..।।' रनिया सुड्डनवा पर बिफरने लगी।

रनिया और सुड्डनवा दोनो ही हमउम्र हैं। जवान हैं। अभी-अभी दोनो में इश्क हुआ है। हुआ क्या है अभी दोनो प्रक्रिया में ही है। वही आज भोर में बइलहा तारा पर दोनो के मिलने का प्रायोजन था।

सुड्डनवा भी कम न था। मोहब्बत पर अधिकार जताना उसे भी आता था। 'अपने क-कहो यार तुम। मैं तो अंधेरेन मा आ गैंव रहा। फिर देखेंव कि कउनो आ रहा है। आगे बढ़ेंव, तो रहें बिजइया काका। ऊं.. हिंयन तलाय करे लागें तो मैं कहेंव कि अबहिन देख लई जइहें तो कइहें कि पण्डित जी का लरिका हिंयन का करत हवे। मैं चढ़ गैंव भाई हरसिंगार के पेड़ मा। अब ओतनेन मा तुम आइव, तो कहेका काका शउंचे आवें तारा कइती। रजा ढेलेन से पोंछ के निकर लिहेन।'

'हा..हा..हा..' दोनो ने जमकर ठहाके लगाए। और संजीदगी से एक-दूसरे की तरफ देखते हुए कल ठीक समय पर मिलने की प्रतिबद्धता जताकर चल दिए। सुड्डनवा खेतों के रास्ते हाथ झुलाते मस्ती में गाता चला गया और रनिया अपने मूंजों को ठीक तरह से पानी में डुबोकर चंचल चित से अपनी चोटी को ऊँगलियों में फँसाती हुयी चली जा रही थी। दिन चढ़ने के साथ तालाब में हरश्रृंगार की सुगन्ध भी फीकी पड़ रही थी। वो उड़कर पीछे-पीछे रनिया के साथ कच्ची सड़क के रास्ते उसका पीछा करते चली गयी।

आज गाँव में बड़ी रेलमपेल मची है। लोग आ रहे हैं और जा रहे हैं। कुछ सरकारी गाड़ियों की चहल-पहल दिख रही है। पान-परचूनों की दुकानों पर कुछ सरकारी मुलाज़िम खड़े होकर कोने में पीच मार रहे हैं और कुछ हवा में बीड़ी का धुँआ उड़ा रहे हैं। कुछ ख़ास किस्म की होर्डिंग लगी एक गाड़ी गाँव के बीचो-बीच सड़क से गुजर रही है। गाड़ी के डाले पर बैठा एक आदमी माइक से कुछ महिला-वहिला टाईप बोले जा रहा है। दूसरा, पीले रंग के कुछ रद्दी से पर्चे हवा में उड़ा रहा है जिनको गाँव के छोटे-छोटे बच्चे एक हाथ से उठा रहे हैं और दूसरे हाथ से कोई अपनी निक्कर सँभाल रहा है, कोई अपनी नाक पोछ रहा है तो कोई उस टॉयर को कीमती कोहिनूर सा धरे है जिसे वो अभी-अभी एक छोटी सी डंडी से पीटता चला आया है। कुछ ही देर के बाद कलुवा डोमार पूरे गाँव में अपनी डुग्गी पीटने लगा और ज़ोर-ज़ोर से कहता- 'सुनो...! सुनो...! सब गाँव वालेन का पंचाइत भवन मा एकट्ठा होएका है। कलट्टर साहेब भांषण देहें। सुनो...! सुनो...!!'

सभी पंचायत भवन पर इकट्ठा हैं। इस भवन की आज कुछ ख़ास तरह से सजावट की गयी है। दीवारों पर तमाम महिला शख़्सियतों की तस्वीरें टँगी हैं। छाया के लिए पीले रंग की तिरपाल लगायी गयी है। महिलाओं के बैठने के लिए मंच से सटाकर एक दरी बिछी है। उस पर गाँव की औरतें बैठी हैं जिनके इर्द-गिर्द कुछ छोटी-छोटी बच्चियाँ चहक रही हैं। उसके पीछे दो पोलों के सहारे एक रस्सी बँधी है। और फिर उसके उस पार सभी पुरुष जन एकत्रित हैं। 'अपने बल मा ठाढ़ होव नहीं तो अबहिन उठा के दई मारब घोड़ऊ के।' सुड्डनवा को किसी ने धक्किया दिया है।

'मैं नो अहिंउ सुड्डन भइया। य महेन्दवा आय।'

'देखलेव मैं चुपचाप ठाढ़ हों भइया।' महेन्द्र ने अपनी सफाई दी।

'मूं बंद कईलेव अच्छा सारेव..। चुप्पे सुनों ओकई का याय होत है।' सुड्डन ने सावधान किया।

'क भइया, व जउन फोटू टाँगी है। ...व जउन मेहेरिया जहाज उड़ावत ही।'

'हाँ-हाँ बता।' सुड्डन ने जल्दी ही उसकी इच्छा जाननी चाही।

'कहत हें कि व जहाज नहीं उतार पाई रही भुंई मा। सूरज से गरम होइके ओकी जहाज गलगे रहै। फिर वा मरगे?' महेन्द्र ने अपनी बात पूरी की।

'गदहा व कल्पना चावला की फोटू आय। सूरज-ऊरज से ओकेर जहाज नहीं गरम भे रही। चुप्पे देख, का होय जात है हिंया।....अच्छा देख, मंच मा कलेक्टर का तो तैं जन्तेन हन, हना? ईं अपने तहसील की एसडीयम अहीं भला। मेन कलेक्टर जिला मा बइठत है। अउर उनके बगल मा व जउन एक लड़की ठाढ़ ही ना, ओका नाम जन्ते है तैं?'

'ऊँहूं..'

'ससू व मोर फ्रेण्ड ही।'

'का..! व तुमका जनत ही?' महेन्द्र को सुड्डन की बातों पर यक़ीन न हो रहा था।

'अबे अइसिन नहीं जानत। व हमरे फेसबुक मा हवे। य झार मेहेरियनेन की फोटू डावा करत ही अक्सर।'

महेन्द्र से रहा न गया और वो बोल पड़ा- 'सुड्डन भइया, बुरा न मानो तो एक बात कही?'

'कहो।'

'कटरीन कैफ क जानत हो ना? व हमार फेरेण्ड आय। मगर व हमका अइसिन नहीं जानत, बाकी ओकेर फोटू हमरे पर्स मा है।' महेन्द्र ने तफरीह की।

'बकलोल, तैं जीवन भर गुंहेन उठइहे। गदहा पर्स औ फेसबुक मा बहुत अन्तर है। अब अन्तर का है, मैं तोहिंका य न बता पइहों समझे? कउनो तैं या तोर बाप मोहिका घिउ नहीं परस जात अहीं। चुप्पे सुन। देख मैडम का बोल रही हैं।' सुड्डन ने थोड़ा नाराज़ होकर कहा।

मंच पर एसडीएम का भाषण शुरू था।

'....तो इस तरह मिस वीणा श्रीवास्तव ने बहुत ही कम उम्र में समाज को ऊँचा उठाने का जिम्मा अपने नाजुक कंधों पर लिया है। आप सब अगर अपनी औरतों और बेटियों का ज़्यादा से ज़्यादा ख़्याल रख पाएँगे, इज्जत देंगे तो समझना कि आप मिस वीणा जी के कंधों को मज़बूती दे रहे हैं। आज इस गाँव में वीणा जी आपसे अपनी यही बातें कहने आयी हैं। मिस वीणा जी की मदद के लिए हमारा प्रशासन भी इनके साथ हर क़दम पर खड़ा रहेगा मैं इसका विश्वास दिलाती हूँ।' एसडीएम के अन्तिम भाषण के बाद सभी ने तालियाँ बजाईं। गाँव में फिर से लोग बिखरने लगे। औरतें अपने काम पर निकल पड़ीं। छोटे-छोटे बच्चे अपने टॉयर लेकर पगडंडी पर दौड़ने लगे।

आज भोर किसी ने देखी ही नहीं सुड्डनवा को छोड़कर। ख़बर है कि रनिया के घर गाय को बछड़ा हुआ है। वो अपनी अम्मा के साथ उसी नवजात की देखभाल में लगी है। लेकिन सुड्डनवा को बइलहा तारा के किनारे सुकून मिलने लगा था। अब पता नहीं कि ये उस पोखर की सुषमा और उसके आकर्षण का सुकूं था या फिर यहाँ रनिया के साथ बीते हुए कुछ पलों की स्मृति में डूबने वो यहाँ चला आना पसन्द करने लगा था। बहरहाल जो भी हो सुड्डनवा तारा के किनारे आकर फिर से हरश्रृंगार के पेड़ पर चढ़ गया। वहाँ से पोखर के दृष्टा का दृष्टिकोण ही बदल जाता है, जो उस पोखर के वातावरण को और भी ख़ूबसूरत बना देता है।

बिजइया को भी आज देरी हुयी थी। कल शाम को चौपाल के बाद कुछ दिलदार बड़े-बुज़ुर्ग खेलावन के ट्यूब-वेल का रुख़ कर गये थे। उसमें बिजइया भी शामिल था। दरअसल गाँव के खेलावन मुराई के ट्यूब-वेल पर 'कच्ची' बनने का चलन है। 'कच्ची' एक तरह की शराब है जो महुआ के फूलों को सड़ाकर तैयार की जाती है। तो फिर क्या था, कल जमकर बनी और ठूँसकर चली। सो बिजइया ने भी अपने नटई तक गटकी थी कल। इसी कारण आज देर तक वो बिस्तर न छोड़ सका था। ख़ैर, बिजइया आकर सरपत की आड़ में नित्य-क्रिया में लग गया। कल की एल्कोहल से उफनते पेट ने गुर्राहट मचाई और कुछ पड़..पड़..की आवाज़ फूट पड़ी। ये आवाज़ वहाँ..हरश्रृंगार के पेड़ पर चढ़े सुड्डनवा के कानों तक जा पड़ी। सुनकर सुड्डनवा भुकभुका गया, क्योंकि उसकी पोखर से नैनमिचोली जो टूट गयी थी। उसने एक साँस में बिजइया को दसों गालियाँ दे डाली। लेकिन फिर भी उसका मन भरा नही। उसका पोखर की ओर से ध्यान भंग हो चुका था। रनिया भी उसके साथ ना थी जो उसका ध्यान लगा रहता। फिर भई ख़ाली दिमाग़ शैतान का घर। बला शैतान क्या न कर जाए। उसने झटपट अपने जेब से मोबाइल-फोन निकाला और बिजइया की चार-पाँच तस्वीरें अपने मोबाइल-फोन के कैमरे में क़ैद कर लीं।

'हरामखोर क यही जघा मिला करत ही उफरे का।' बिजइया के शौच कर चले जाने के बाद सुड्डनवा पेड़ से नीचे उतर कर भुनभुना रहा था। वो घर जाने कोमुड़ा। पीछे रनिया खड़ी थी।

'का हो बाँके बिहारी के लाल! तनी थम भी जाओ।' रनिया ने सुड्डनवा से मसखरी की।

'देख रे हम कतो अपने बाप का नाम नहीं लीना अइसी जबान से। तैं हमरे बाप तक न चढ़ जानिन, नहीं तो ठीक न होई हाँ।'

'तो जइसे ठीक होय कइ देव पण्डित जी।' रनिया अपनी चोटी हिलाकर बोली।

'मोका ठीक तो करेन क परी, मगर तोहिंका नहीं बिजइया काका का।' सुड्डनवा का मुँह अब भी लाल है।

'का हो! का अनर्थ कई डाएन बिजइया काका एतना, जउन या पेड़ा जइसन मूं बनाएव है। एका तनी लड्डू जइसे रहै देव ना। हाँ, अब बताओ का बात है?' रनिया सुड्डन का हाथ पकड़कर पोखर की तरफ चलने लगी।

'यार जब देखो पिछुआरा उनार के हिंया फड़फड़ाय लागा करत हंवें। ससुरन का हग्गे का जगेन हस कहूँ नहीं मिला करत ही। तुम ख़ुद बताओ हिंया, य तारा किनारे केतना बढ़िया लागत हवे, हांय..। कउनतान केर आनन्द हिंया हवे। मगर यहू तलक का गंधुवाय रहत हैं ई घोड़ा हरे। मै आज एहिकी सारे की हगत की फोटू खींच लिये हौं।'

'हरामी...।।'

'हरामी नहीं, एहिका मैं डइहों फेसबुक मा। अउर ऊपर हेडिंग लिखिहों गुड मारनिंग।'

'कस्सम से तुम हो बड़े वा। पता है इंटरनेट मा चला जाई तो हर कोऊ देखी। जउन देखी व मड़ई का कही?' रनिया को चिन्ता थी।

'मड़ई का कही। शहरन के बड़े-बड़े स्वीमिंग-पुलन मा भी भला मड़ई शउंचत हें का। हुंआ तो मड़ई चाव से सिर्फ़ बइठा करत हें। तो तुम अपने गाँव मा भी समझो य बइलहा तारा आय स्वीमिंग

पुल। अउर हम, तुम अ ईं बतख्खें आई हंवें हिंया घूमें। तो ससुर बिजइया काका कउन होत हंवें हिंया हगे वाले। य तारा उनके बाप की कउनो बपउती आय का।' सुड्डनवा जज़्बाती होता चला गया। और रनिया भी उसकी धारा में साथ बहती चली जा रही थी। 'हुंआ शहरन मा इनकी सबकी सरकार देखभाल करत ही। हिंया तो परधानिन का लरिका दहिजार खुदेन खेतहा मा जात है।'

'देख रनिया, खेतहन का तो मैं ठेका नहीं लिहों मग़र आज से मैं यही हरसिंगार के पेड़े मा बइठा करिहों अउर जउन भी हग्गे आयी ना, ओहिकी फोटू मैं फेसबुक मा ओहिके सारे के नाम-गाँव सहित डइहों..।' सुड्डन का निश्चय दृढ़ था।

'ठीक है डाएव। यही बहाने हम पंचेन का य तारा किनारे बढ़िया होईजाई घूमे-टहरे का।' रनिया भी सुड्डनवा के साथ थी।

सुड्डन ने वहीं तारा किनारे बैठे-बैठे अपना फेसबुक खोला और बिजइया की खींची गई तस्वारों में से उसने चार तस्वीरों का एक कोलेज बनाकर ऊपर लिखा- 'गुड मॉर्निंग...दोस्तों, नाम-बिजइया काका, उम्र-लगभग 48 साल, गाँव- सरसई ख़ुर्द, पता- पक्की कुआँ के सामने, सहेंड़वापर, सरसई ख़ुर्द, खागा-फ़तेहपुर (उ.प्र.)
दोस्तों इनकी ओर से आप सभी लोगों को खुली हवा का सलाम तोहफ़ा।' और पोस्ट कर दिया।

पायज़ेब की छनछन...। कन्धे पर मूंज का एक ढेर। एक हाथ में घी से भरा दीपक और दूसरा हाथ मूंज के ढेर पर। कमर हिलाती आयी रनिया तारा के समीप पहुँची। वो आज जल्दी आ गयी है। उसने घी का दीया जलाकर बइलहा तारा में छोड़ा ही था कि पीछे एक और जलता घी का दीपक लिये सुड्डनवा भी खड़ा था।
'का रे, तोर महतारी तो बड़ी चुगुलखोरिन निकली।'

'का भा..? देखो हो, फिर तुमहूं हमरे महतारी तक न चढ़ो जानेव।' रनिया बात समझी ही न थी।

'काल उईं दुपहरिया मा मोरे दुआरे बइठी रहीं, तबहिन मैं सबके सामने कहे रहेंव की नदी-तलाव मा घी का दिया छोड़ब शुभ होत है। नदी-तलाव खुश रहत हैं तो आनन्द बढ़त है। अउर उईं रहीं कि टीप दिहिन जाके तोसे। तउन तहूं घी केर दिया लइके चली आइन हिंया।'

'हाय दइया.., जउन झूठ बोले सरगे जाए। हमार अम्मा कुछू नहीं कहिन हमसे। हम तो ई सब खुद सोचा रहा अउर यही से एक बोझ मूंज भी ले आवा कि पानी मा डाल के हिंयेन बइठब, ताकी कोऊ भी हमका तारा किनारे देख के तारा मा शउंचे न आई। जइसे व दिन बिजइया काका। याद है न...? जब ढेला.. हाँ?' रनिया ने अपनी सफाई दी।

सुड्डनवा को अब काटो तो ख़ून नहीं। वो शान्त वहीं खड़ा रनिया का मुँह ही ताकता रह गया। जब तक रनिया शान्त होती उससे पहले ही उसने झुककर पोखर को दीपदान कर दिया और वहीं चुपचाप बैठा रहा।
रनिया भी उसे देखकर उसके समीप बैठ गयी। 'का देखत हो?'

'दुइनो दिया।' सुड्डन संजीदा था। 'का चहती है रे रनिया, ईं दुइनो दिया कब तलक जलत रहें..?' सुड्डन ने बात ज़ारी रखी।

'जब तलक ई तारा मा पानी रहे।' रनिया अपने मन की बात कहने की कोशिश कर रही थी।

'तब तो हमका मिलके य तारा के पानी की रक्षा करे क पड़ी।'

'तबहिन तो आज एमा लौ जलाए दिया हवे रे।' रनिया ने और भी स्पष्ट करते हुए सहमति दे दी।

दोनो ही कुछ क्षण के लिए वहीं लेट गये और करवट लेकर एक-दूसरे की आँखों में आँखें डालकर और शब्दों की आवाजाही को थामकर बस, पोखर में बहते हुए दीपकों की लौ को ही अपने-अपने हृदय के शान्त जल में बहने दिया...। जलने दिया...।

धूप चिलचिली हो चली है। हरश्रृंगार के पेड़ पर चढ़े-चढ़े सुड्डनवा को काफी समय हो गया। हालाँकि उसने अपने मोबाइल-फ़ोन के कैमरे से सत्तर बरस के रामाधीर की तस्वीर ले ली थी, उसी अवस्था में जैसे उसने बिजइया की तस्वीर ली थी। लेकिन फिर भी सुड्डनवा बिजइया की ही प्रतीक्षा में अब तक पेड़ पर चढ़ा बैठा है। तब भी बिजइया नहीं आया तो नहीं आया। सुड्डन ने बुज़ुर्ग रामाधीर की भी तस्वीर को फेसबुक पर उनके नाम-पहचान व पता के साथ पोस्ट कर दी।

'बिजइया काका तीन-चार दिन से तलाय कहे नहीं आ रहे हैं इधर? वही दिन से रामाधीर बाबा भी नहीं दिखाई दिहेन! ओके बाद तो तुनुवा का बापो नहीं आवा आय! ईं सब मोरे बारे मा जान तो नहीं गें आय कि मैं इनकी फोटू खईंच लेत हों?' सुड्डन आज सुबह से हरश्रृंगार के पेड़ पर चढ़ा सिर्फ़ ख़ुद से ही बातें करता रहा। ये सब सोचकर उसकी चिन्ता बढ़ रही थी। लेकिन उसकी ये चिन्ता उसके लिए कोई मामूली चिंता न थी। वो झटपट नीचे आया और रनिया के पास जाकर अपनी चिन्ता का कारण बताया। रनिया को भी इस मामले के बारे में कुछ ख़ास समझ नहीं आ रहा था। आज की खींची गयी तस्वीरों को पोस्ट करने के बाद सुड्डन सीधे बिजइया के घर पहुँचा। 'बिजइया काका..। वो बिजइया काका..।।'

'कस लाला सुड्डन, का हाल हवे?' बिजइया लाल चौकड़ी की कमीज़ पहने घर से निकलकर सुड्डन से मुख़ातिब हुआ।

'कुच्छू नहीं काका, खेतहन कइती जात रहेंव तो मैं कहों कि काका केर हाल-चाल लेत चलों बहुत दिना से भेंट न भे रही।'

'सब भगवान की किरपा है लाला। तनी घर मा सण्डास आय बनुवावत रहेन। कइउ दिना से लागा लगुवाय रहा, बस नचका याई है। यही के मारे तनी के निकर नहीं पउतेंव आय घर से।'

'कहो, अबे तो गांव मा निरा ससू फिरे की जगह परी हवे, चहे जउने कइती निपटियावे। बइलहा तारेन कइत अबे महाव जगह परी है।' सुड्डन ने बिजइया के विचार जानने के लिए ये सब कहा।

'अरे नहीं हो लाला, नीक-सूक तारा कइत गन्दगी करब ठीक नही आय।'

'एहिकेर एण्टीना आज बीबीसी लंदन कहे पकड़ रहा है।' सुड्डन ने ख़ुद से कहा।

'है की नहीं लाला..?' बिजइया ने सहमति माँगी।

'आंए...! हां-हां।' सुड्डन समझे-नासमझे अपनी सहमति बिजइया को देकर आगे बढ़ गया।

अब तो सुड्डन की चिन्ता और बढ़ गयी। ये अचानक से बिजइया को क्या हो गया? इसके विचारों में ये परिवर्तन कैसे आया? और अचानक से इसकी मदद किसने कर दी? ऐसे ही तमाम सवाल सुड्डन के दिमाग़ में रथ हाँकने लगे। वो भागकर रामाधीर बाबा के घर पहुँचा। पूरी तफ़्तीश के बाद सुड्डन की चिन्ता और भी भारी पड़ने लगी, क्योंकि जो हाल बिजइया का था वही रामाधीर के घर पर भी था। रामाधीर के घर पर भी शौचालय बनने के लिए गड्ढा खोदा जा चुका था। सुड्डन ने दो और उन घरों के चक्कर काटे जिनकी तस्वीर उसने अपने फेसबुक पर अपलोड की थी। उन सभी के घर पर भी शौचालय बन रहा था। सुड्डन हैरान था। उस दिन सुड्डन को रात भर नींद नहीं आयी।

'बाबा य कउनो मन्तर-वन्तर नो हाय, बिना मतलब मा घबराओ ना।' रनिया सुड्डन को उसकी चिन्ता का विश्लेषण करके समझाने में व्यस्त है।

'फिर य कसत होइ सकत है रनिया, कि हम जेकी-जेकी फोटू खींचा ओके-वओके घर मा सण्डास बने लाग?'

'तो तुम एसे खुश नहीं हो का कि सब लोग अब बाहर न अइहें तलाय फिरे। एसे तो य तारो साफ-सुथरा बनी।' रनिया ने पूछा।

'नहीं मैं खुश तो हों। मगर फिरो यार एमा कउनो जादू-मन्तर लागत है मोका।' सुड्डन ने अपनी चिन्ता को स्पष्ट करते हुए उसे ज़ारी रखा।

'तुम चुप्पे-चाप आपन काम चालू रक्खो।' रनिया ने सख़्त होकर सलाह दी।

सुड्डन ने रनिया की बात मान ली और झट से हरश्रृंगार के पेड़ पर चढ़ गया, किसी अगले को अपने मोबाइल-फ़ोन के कैमरे में कैद करने को।

पूरे दो महीने बीत गये। गाँव के लगभग हर उस घर में जहाँ शौचालय नहीं था, या तो बन चुके हैं या फिर अभी बन रहे हैं। लेकिन सुड्डनवा की चिन्ता अभी भी वही की वही बनी है, कि आख़िरकार ये सब अचानक से एक साथ कैसे होने लगा।

इस बीच वो एक तांत्रिक से भी मिल चुका है कि बाबा जाने किसके तन्त्र-मन्त्र से ये सब हो रहा है। मैं खुले में शौच करते हुए जिसकी भी तस्वीर फेसबुक पर डाल देता हूँ उसके घर में सण्डास बनने लगता है, जबकि मैं चुपचाप ही ये सब करता हूँ, बिना किसी से बताए, बिना किसी से कुछ भी कहे। इस मन्तर का कोई पार नहीं।

लेकिन सुड्डन अन्दर से बहुत ही ख़ुश है, क्योंकि अब बइलहा तारा के पास कोई गन्दगी करने नहीं आता है।

दिन ढल रहा है। मौसम सुहाना हो गया है। पक्षी अपने विहार से वापस लौट रहे हैं। पेड़ों ने धीरे से अपने पत्तों को हिलाकर फिर से स्निग्धता ओढ़ ली है। हरश्रृंगार के पेड़ पर कलियाँ आयी हैं, उसकी सुगन्ध धीरे-धीरे प्रकृति की रूह में मिलने लगी है। बतख्खें बइलहा तारा में उतरने लगी हैं। सूरज भी शान्त भाव से अपने घर को वापस जाने को विदा माँग रहा है। और हरश्रृंगार के पेड़ के नीचे सुड्डन रनिया के साथ बैठा है। लेकिन उसकी चिन्ता अभी भी उसी तरह जस की तस बनी हुयी है, ये सब किसका मन्तर है...?

दूर से कहीं कलुवा डोमार के डुग्गी की आवाज़ आ रही है। रनिया सुनकर उठ खड़ी हुयी। उसने गाँव की तरफ नज़र दौड़ाई तो हाल ग़ज़ब था। रनिया थोड़ा घबरा सी भी गयी। गाँव के कुछ लोग अपने हाथों में जलती हुयी मशाल लेकर बइलहा तारा की ओर तेज़ी से बढ़े आ रहे हैं। रनिया के मन में अनजाना सा ऊहापोह चल रहा है। लेकिन सुड्डन शान्त वहीं पर बैठा रहा....उदात्त, निश्चल और बेफ़िकर...।

'सुड्डन देख गाँव वाले इधरेन चले आवत हें। उनके हाथ मा मशाल भी हवे। का होइगा..?'

'मन्तर...। य वहीं मन्तर का हिस्सा आये। मान या ना मान रनिया, मगर देखिस कुछ तो है। हल यही मा है।' गाँव वालों का हुजूम एकदम बइलहा तारा के समीप था। कलुवा डोमार ने आवाज़ लगाई। 'सुड्डन महराज...। ओ सुड्डन महराज...।। देखो तुमसे मेम साहब मिले आयी हवें।'

सुड्डन ने खड़े होकर अपना हाथ हिलाया। सभी उसके पास आ पहुँचे। सुड्डन ने देखा कि गाँव वालों के हाथों में जलती मशालों की रोशनी बइलहा तारा में पड़ते ही वो चमक उठा। सुड्डन के साथ गाँव वालों ने भी ये मनोरम दृश्य देखा। वास्तव में सरसई ख़ुर्द गाँव में ये नज़ारा इससे पहले कभी नहीं देखा गया था।

सुड्डन के दिमाग़ में जो मन्तर का बादल उमड़-घुमड़ रहा था, अब वो कुछ-कुछ झड़ने लगा था। सामने अपने फेसबुक की उस मित्र वीणा श्रीवास्तव जो उस दिन एसडीएम साहिबा के साथ पंचायत भवन में भाषण दे रही थी, को देखकर हैरान लेकिन संदेह से परे था।

'हैलो सुड्डन! मै वीणा, एक सामाजिक कार्यकत्री हूँ। मुझे फेसबुक पर आपके पोस्ट लगातार मिलते थे और मै उनको फॉलो करती गयी। मैने उन पर अच्छी तरह से विचार किया और एसडीएम के साथ मिलकर सोचा कि अग़र यही तस्वीरें औरतों व महिलाओं की होती तो क्या...? ज़ाहिर है कि उन सबकी भी ऐसी ही तस्वीरें होती हैं जिन्हे लोग अपनी नंगी आँखों से देखते भी होंगे। तब सोचो, क्या हमारी बहू-बेटियों को शौच के लिए घर से बाहर जाना चाहिए? आपने सोशल नेटवर्किंग टूल का अच्छा उपयोग करके अपने गाँव की सबसे ज़रूरी समस्या को हमारे सामने रखा है सुड्डन। इसके लिए हम सब और पूरा गाँव आपका आभारी है। आपने गाँव में बदलाव लाया है।'

सुड्डन को अब भी कुछ समझ में नहीं आ रहा है कि ये सब क्या हो रहा है। लेकिन जो भी हो रहा है उससे वो ख़ुश बहुत है और सबसे ज़्यादा ख़ुश तो वो इस बात को लेकर है कि उसके मन्तर की शंका का समाधान हो चुका है। वो अब समझ चुका है कि ये मन्तर तो फेसबुक नाम के इसी जन्तर(यन्त्र) का है, जिसे वो उपयोग में लेता है।

सभी बारी-बारी से सुड्डन को बधाईयाँ देने लगे। वो आज असीमित आनन्द में डूबा सबकी बधाइयाँ स्वीकार कर रहा है। लेकिन उसका चित मशालों की रोशनी में नहाए इस बइलहा तारा के आनन्द के साथ उसकी प्रगति का जश्न मना रहा है, जो एक जन्तर के मन्तर से सम्भव हो पाया है।

स्नेह ठाकुर का रचना संसार

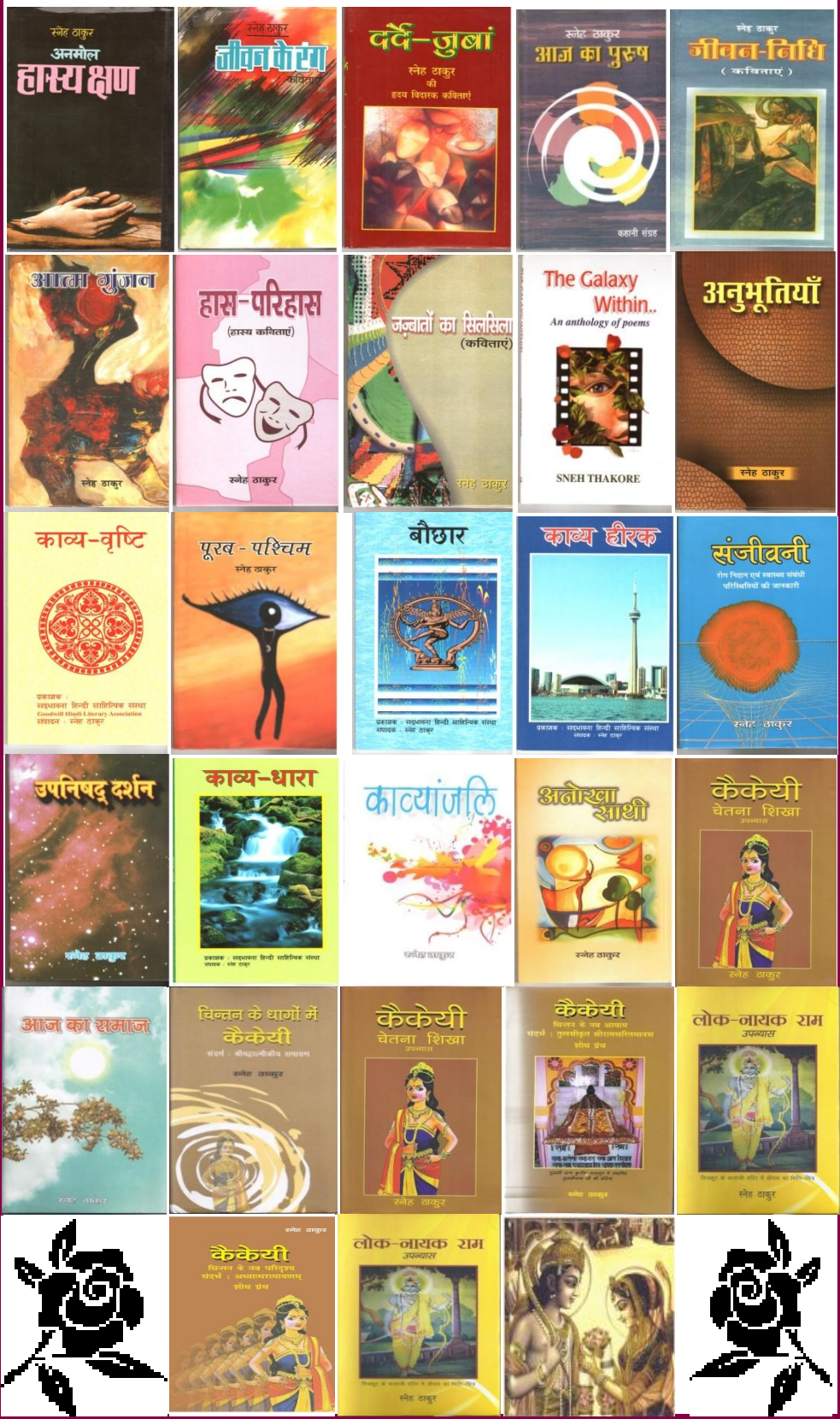

स्नेह ठाकुर की प्रकाशित पुस्तकें

श्रीरामप्रिया सीता	(उपन्यास)
लोक-नायक राम	(उपन्यास, द्वितीय संस्करण)
कैकेयी : चिन्तन के नव परिदृश्य - संदर्भ : अध्यात्मरामायण	(शोध-ग्रन्थ)
लोक-नायक राम	(उपन्यास)
कैकेयी : चिन्तन के नव आयाम - संदर्भ : तुलसीकृत श्रीरामचरितमानस	(शोध-ग्रन्थ)
कैकेयी : चेतना-शिखा	(उपन्यास, साहित्य अकादमी म. प्र. अखिल भारतीय 'वीरसिंह देव' पुरस्कार सम्मान, द्वितीय संस्करण)
चिन्तन के धागों में कैकेयी - संदर्भ : श्रीमदवाल्मीकीय रामायण	(शोध-ग्रन्थ)
आज का समाज	(लेख-संग्रह)
कैकेयी : चेतना-शिखा	(उपन्यास, राष्ट्रपति भवन पुस्तकालय में संग्रहित)
अनोखा साथी	(कहानी-संग्रह)
काव्यांजलि	(काव्य-संग्रह)
काव्य-धारा	(संकलन एवं संपादन)
उपनिषद दर्शन	(अध्यात्मिक)
संजीवनी	(स्वास्थ्य सम्बन्धी लेख)
काव्य हीरक	(संकलन एवं संपादन)
बौछार	(संकलन एवं संपादन)
पूरब-पश्चिम	(आप्रवासी सम्बन्धित आलेख संग्रह)
काव्य-वृष्टि	(संकलन एवं संपादन)
अनुभूतियाँ	(काव्य-संग्रह)
The Galaxy Within	(A collection of English poems)
ज़ज़्बातों का सिलसिला	(काव्य-संग्रह)
हास-परिहास	(हास्य कविताएँ)
आत्म-गुंजन	(आध्यात्मिक-दार्शनिक गीत)
जीवन-निधि	(काव्य-संग्रह)
आज का पुरुष	(कहानी-संग्रह)
दर्दे-ज़ुबाँ	(नज़्म व ग़ज़ल संग्रह)
जीवन के रंग	(काव्य-संग्रह)
अनमोल हास्य क्षण	(नाटक-संग्रह)

प्रकाशक व वितरक

स्टार पब्लिकेशंज़ (प्रा.) लि.
४/५ बी., आसफ अली रोड
नई दिल्ली - ११०००२
भारत
Star Publishers' Distributors
55, Warren Street
LONDON – W1T 5NW
England

दिल्ली प्रेस की सरिता व अन्य राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में भी रचनाएँ प्रकाशित